Datta, Akshaya Kumar
Caru-patha

चारु-पाठ

द्वितीयभाग

श्रीअक्षयकुमारदत्तकीबंगालीपुस्तकसे
पंडितभानुदत्तविशारदनेहिन्दीभाषामेंअनुवादित
किया

Entertaining Lessons
In Science and Literature.

PART II

Translated by

PANDIT BHANU-DATT

Printed under the auspices of the Panjab University College.

मित्रविलासलाहोरमेपंडितमुकुंदरामकेअधिकारसे
छपा

प्रथमवार ३००

मूल्य ।=)

विज्ञापन

इस देशकी पाठ-शालाओंमे जो हिन्दी भाषाकी पुस्तकों का प्रचार न होने के कारण लिखने वालों को भी यथेष्ट उत्साह नहीं, परन्तु जिन देशों मे इस भाषा का प्रचार है वहां भी ऐसीं२ पुस्तकें बहुत थोड़ी लिखी जाती हैं जिस्से भाषा सीखने के साथ२ ही विद्यार्थियों को सुन्दर२ नीतिपूर्ण उपदेश, संसार के नियम, देशोन्नति के उपाय, और ईश्वर परभी दृढ़विश्वास आदि होवें। इस आशयको पूर्ण करने के अर्थ यह "चारुपाठ" पुस्तक जो उक्त उद्देश्यको पूरा करती है और जिस्का बङ्गालदेश की पाठ-शाला ओंमे पूरा२ प्रचार है, हिन्दी भाषामे मैने अनुवाद की है, और पञ्जाबकी महा-विद्यालय सभाने अपने ही व्ययसे छापकर मुझको अनुगृहीत कियाहै। अबमैं सब सज्जनों के आगे यह प्रार्थना करताहूं कि, वे मेरे इस दोष-पुञ्जमे से दोषान्वेषण मे प्रवृत्त न होंवें।

पण्डित भानुदत्त शर्म्मा

सूची-पत्र

द्वितीय-भाग

ओं तत्सत्

चारु पाठ

द्वितीय भाग

प्रथम परिच्छेद

नीति चतुष्टय

करुणामय परमेश्वर ने हम सबों को सृजन कियाहै, और वही प्रतिदिन पालन करताहै। उसने हमारे हित के लिये जल, पवन, अग्नि, और नाना प्रकार के फल, मूल और शस्य, सृजेहैं, हमारे रोग दूर होने के लिये कई प्रकार की औषधियें भी सृजन कर रक्खी हैं, और हम उसके शुभनियम जान, पालन करके, सुखऔर स्वतन्त्रता से अपनी आयुको वितावें, इस आशय से उसने कृपाकर हमको बुद्धि-वृत्ति और धर्म्म- प्रवृत्ति आदिभी दीहैं। हम सब, जन्म से ले कर जितने सुख

भोग करते हैं उन्का दाता वही है। क्या माता पिता, क्या पुत्र कन्या, क्या भ्रातृ बन्धु, क्या परोपकारी, देश हितैषी, जिससे जो उपकार प्राप्त करते हैं, उन सबोंका मूल कारण वही है। अतएव हे बालको! उसे मन से श्रद्धा करो, उस्के कृतज्ञ हो और तन मन से उस्के नियम पालने मे यत्नवान् हो।

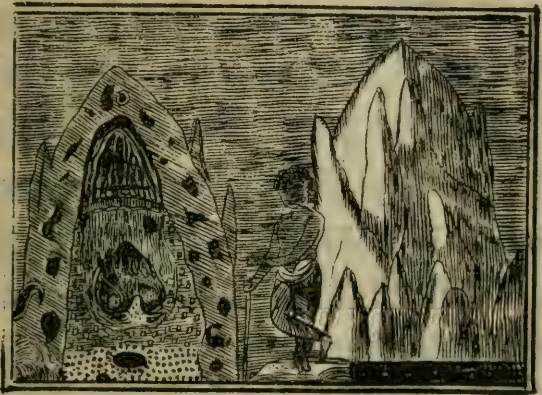
२ उस्के नियम उलङ्घन करके जो हम कई प्रकार के क्लेश भोगने लगते हैं, यह केवल हमाराहि दोष है। अपरिमित-भोजन, मादक-सेवन, रात्रि-जागरण, दुर्गन्ध युक्त स्थानमे वास, अत्यन्त-परिश्रम, अथवा एक बार ही परिश्रमका परित्याग आदि नाना प्रकार के अहित कार्य्य करने से दुःखी होजाते हैं, और धन सञ्चह मे असमर्थ्य होकर अन्न और वस्त्रकाभी कष्ट से निर्वाह करते हैं शत्रुओं के अधीन होकर मिथ्या कथन, अवैध-इन्द्रिय-सेवन, और अन्यान्य प्रकार पाप करने से सदाभयभीत, और लोगों के निकट निन्दित, और

राज द्वार से दण्डित हो जाते हैं। इसी से क्या शरीर के, क्या मन के, सब प्रकार के दोषों से छूटे रहो, ज्ञान के अनुशीलन मे और धर्म्म के अनुष्ठान मे रत रहकर अपने अन्तः करण को सदा निर्द्दोष और प्रसन्न रक्खो, सन्तोष रूप सुधाकारस पीकर अपूर्व सुखका सम्भोग करो।

३ जिन्के साथ एक घर मे रहना पड़े, उन्के सदा सुखी और आनन्द रखने की चेष्टा करो, इसी अभि प्राय से परमे श्वर ने तुमको भक्ति, स्नेह, दया, आदि सत् वृत्तियें दी हैं। माता पिता को भक्ति और श्रद्धा से सुखी करने मे सचेष्ट हो, भ्राता भगिनीयों के साथ सतत सद्भाव रखकर उन्के कल्याण की चिन्ता और हित कार्य्य करने मे लगे रहो, भृत्य और दासों पर दया युक्त और अनुकूल रहो, परिजनों के बीच रहकर किसी को अनर्थक प्रभुत्व दिखला, और कर्कश वाक्य कह, दुखी नकरो, सबको कोमल वचन कह और प्रिय आचरण के साथ सुखी करो।

४ परमेश्वर हम सबोंका करुणामय पिताहै इसी लिये हमको उचित है, कि सबों को भाईयों की रीतजानें, और सबके साथ न्याय्य व्यवहार करें, सामर्थ्य भर सबके भलेमे हि लगेरहैं, मनमे द्वेष और हिंसा कोध्यानभी नदेवें, भयसे भी किसीका अनिष्टनसोचें, परोपकार रूपव्रतके पालनेमे कभी त्रुटिन करें, साधु पुरुषों के साथ सतत सहवास करें, सबगुणों के भूषण विनय, और शिष्टाचार को अवलम्बन करके सबके प्रियपात्र होवें। केवल परिवार पालन, और स्वजनों के शुभका अनुसन्धान करके निश्चिन्त हो जाना मनुष्यके लिये उचित नहींहै जिसप्रकार स्वदेशीय कुरीतियें परिवर्जित और शोधित होवें, स्वदेशीय लोगों की अवस्था प्रतिदिन उन्नत होवे, इसका उपाय और उद्योग करना आवश्यक कर्म्महै। स्वदेश हम सबों का एक घर है, स्वदेश के शुभकी उपेक्षा करनी अधम पुरुषों का काम है।

वल्मीक



पुत्तिका नामक कीड़े रहने का घर बनाने मे जैसी निपुणता प्रकाश करते हैं वैसी और कोई जन्तु नहीं कर सक्ता। इन्का इतिहास अतिविस्मय जनक है, और इन्के रहने का घर बल्मीक कहलाता है।

ये कीड़े कई प्रकार के होते हैं; उन्मे से जिन्का चित्र यहां दिखाया है, इन्का नाम सामरिक पुत्तिका है।

सामरिक पुत्तिका आफ्रिका-खण्ड मे अधिक होती हैं।

इस प्रस्तावके आदिमे उन्ही के वल्मीक का प्रतिरूप दिखाया गयाहै, इस प्रतिरूपमे वैसा चित्र है जैसा कि वल्मीकके खण्ड करने से देख पड़े। इस्के एक खण्डमे वल्मीक का वहि-र्भाग, और दूसरे मे अन्त-र्भाग दृष्टि-गोचर होताहै। जो सामरिक प्रतिका वल्मीक रचना करतीहैं उन्के शरीर की लंबाई एक इञ्चकी चौथाई सेभी कमहोताहै, परन्तु उन्का बनाया हुआ चार ७।८ हाथ ऊंचा होताहै और कई बल्मीक इससे भी अधिक ऊंचे देखने मे आयेहैं। विचार करके देखने से, ये सब वल्मीक, प्रतिका ओंके शरीरकी अपेक्षा इतने ऊंचे होतेहैं कि मनुष्य अबतक अपने देहकी अपेक्षा इतने गुण ऊंची अटारी मन्दिर, स्तम्भ आदि बनाने मे समर्थ नहीं हुआ। सेनेगेल नामक स्थानके पास कहीं २ इतने इकठे वल्मीक देखने मे आतेहैं कि उस्को बसाहुआ प्रति का ग्राम कहें तो कह सक्तेहैं।

उल्लिखित बल्मीक जैसा ऊंचाहै इस्के निर्म्माण की परिपाटी भी वैसी हीहै। इस्को भीतरसे तोड़ने पर सामरिक उन्निकाओंके नैपुण्य और चातुर्य्य का स्पष्ट प्रमाण देख अत्यंत आश्चर्य्य आताहै। अपनी भलीरीत आहार विहार सम्पादन केलिये जो प्रणाली आवश्यकहै वह प्रणाली उन्केद्वारा सुन्दर रीति से सम्पन्न की हुईहोतीहै। प्रसाद, भाण्डार-गृह, शिशु-शाला, पथ, सेतु, सोपान आदिभी अत्यन्त सुन्दर रीतसे बनाये हुएहोतेहैं। एकस्थानसे दूसरे स्थानपर जानेके लिये सुगम-पथ बना रखते हैं; एक प्रदेशसे दूसरे प्रदेश मे जानेपर जहां २ कुटिल पथ के कारण बहुत घूम कर जाना पड़ता है वहां एक २ सेतुबना, जानेआनेकी सुविधा करलेतेहैं। वे इस प्रकार अपने रहने के घरको सर्वाङ्ग-सुन्दर बना, उस्के बीच सुखसे रहतेहैं। इन्का घर ऐसा दृढ़ और कठिन होताहै कि धाप मनुष्योंके इसपर चढ़जानेसे गिर नहिं पड़ता।

सामरिक पुत्तिकाओं की कार्य्य-प्रणालीभी अतिसुन्दर होतीहै। इसप्रणाली को एक उत्कृष्ट राज्यकी व्यवस्था-प्रणाली कहें तो कह सकें हैं। ये सब तीन श्रेणीयों मे बटीहुई होतीहैं, १ श्रामिक-पुत्तिका, २ सैनिक-पुत्तिका, और ३ विशिष्ट-पुत्तिका। श्रामिक-पुत्तिका, गृह, पथ, सेतु आदि बनाती हैं सैनिक पुत्तिका घरकी रखवारी, और प्रयोजनानुसार शत्रुओंके साथ युद्ध भी करती हैं इसीसे इन्का शरीर श्रामिक पुत्तिकाओंके शरीर की अपेक्षा प्रायः १५ गुण बड़ा होताहै। विशिष्ट पुत्तिका नतो घरबनाती हैं, नयुद्धकरने मे प्रवृत्तहोतीहैं और न अपने आपकी रक्षाही करसक्तीहैं परन्तु कलेवर इन्का सबसे परिणत और उत्कृष्ट होताहै शरीर मे पंख भी निकले हुएहोतेहैं सैनिक-पुत्तिकाओंके देह से द्विगुण और श्रामिक पुत्तिकाओं के शरीर से तीस गुण बड़ा होता है, इसलिये और सब पुत्तिका उन्को सर्व-प्रधान जान, सन्मान

करती हुई प्रधान-पदमें अधिरूढ़ करतीहैं। पुत्रिका इस पदमे अभिषिक्त होनेके पीछे कई एक सप्ताहों के बीच मेही उड़ कर और स्थान चलीजातीहैं जिस्के थोड़ी देरपीछे इन्के सब पक्ष कुड़जातेहैं और पक्षी, पतङ्ग, आदिआकर कईयोंको खालेतेहैं, और सैकड़ो समीपी जलाशयोंमे गिर पड़तीहैं। आफ्रीका निवासी उन्हें पकड़ भूनकर खाजातेहैं।

इसी प्रकार प्रायः सब विशिष्ट-पुत्रिका नष्टहो जातीहैं। यदि २।४ किसीप्रकार वचभीजावें और श्रमिक-पुत्रिका उन्हें देखलें, तो उसीसमय राजा और रानीके स्थानमे नियुक्त करदेतीहैं, और एक महीके घर केभीतर रखकर यत्नसे उन्का पालन किया करतीहैं।

पीछे जब रानी के सन्तान उत्पन्न होने लगतीहै तो एक लकड़ी काघर बना रानी जितने अण्डे देती जाती है उन्हें बड़ी सावधानीसे शीघ्र उस घरमे रखती जातीहैं।

उक्तरानी जबगर्भवती होतीहै उस्की अवस्था और रूप

ऐसे अपूर्व होजाते हैं, कि उन्का वृत्तांत सुन विस्मय युक्त होजाना होता है। उस्का वस्ति देश क्रम २ से मोटा होता २ और सब अङ्गोंसे १५०० अथवा २००० गुण स्थूल होजाता है, शरीर अपने स्वामीके शरीर से १००० एक सहस्र गुणा, और आमिक पुत्तिका ओं के शरीर की अपेक्षा २०। ३० सहस्रगुणा विस्तृत होजाता है। किसी २ पण्डित ने गणनाकरके देखा है, कि एक पुत्तिका महिषी ६० घड़ी के बीच ८०,००० सहस्र अण्डे उत्पन्न किये हैं। प्रसव कालमे कितनी एक आमिक-पुत्तिका उसके पास सावधान होकर खड़ी रहती हैं और इन सब अण्डों को ले, उक्त लकड़ी के घरमे रखती जाती हैं। इन अण्डों के फूटने पर जो पुत्तिका-शावक इन्मेसे निकसते हैं उन्हें आमिक-पुत्तिका अच्छी रीतिसे लालन पालन करती हैं और उन्की रक्षाके लिये जिस बात, वा जिस वस्तुकी आवश्यकताहो, तुरन्त सम्पादन कर देती हैं। सब शावक इस प्रकार लालित पालित हो सक्षम

और श्रम-ज्ञम हुए२ वल्मीक रूप सुरम्य-राज्यका काम करने लगजाते हैं।

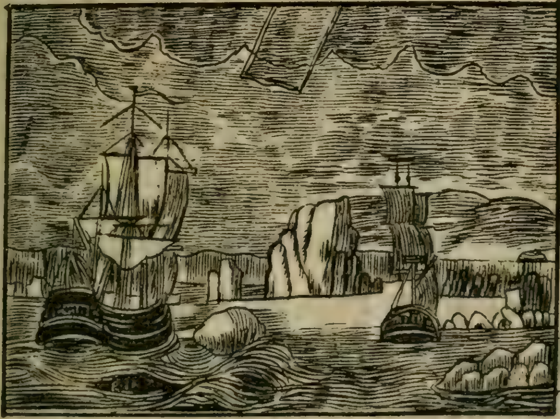
कई चतुर पुरुषोंने प्रत्यक्ष देखाहै, कि यदि बल्मीक का कोई स्थान तोड़ दियाजाय, तो उसीद्वारा एक सैनिक-प्तिका उस भग्नस्थान पर आखड़ी होतीहै, थोड़ी देर पीछे और दोतीन आजातीहैं अनन्तर बहुतसी प्तिका बाहर आ, एकत्र हो, वल्मीक के ऊपर आघात करती हुई इधर उधर घूमती है, और एक प्रकार का शब्द करके आततायी पर आक्रमण करतीहैं, दंशन करती हैं, और उसके हटादेनेके लिये यथा-साध्य चेष्टा करतीहैं परन्तु जब वल्मीक पर आघात करने से हटजावें, उसीसमय लौटकर वल्मीक के भीतर प्रवेश करजातीहैं। अनन्तर सहस्र२ श्रामिक प्तिका बाहर निकल उसटूटे हुए स्थान के बनाने मे फिर लग जातीहैं। आश्चर्य यहहै कि लाखों प्तिका इकट्ठी हो कर कामकरने लगती हैं, परंतु किसी के काममे कोई भी

विघ्न नहीं करती और एक पलभर भी अपने कामसे हटी नहीं रहती। एक २ सैनिक-पुत्रिका श्रामिक-पुत्रिकाओंके दलके संग रहतीहै प्रतीत होताहै कि वह कभी तो उन्की रानी बन बयठतीहै और कभी पहरु के समान रखवाली करती रहती है विशेष करके एक सैनिक-पुत्रिका भग्न-स्थान के अति निकट आखड़ी हो, शब्द करती है, और श्रामिक-पुत्रिका उसीक्षण एक प्रकार का ऊंचा शब्द करती हुई पहिले से द्विगुण काम करने मे उत्ता वली करती हैं। मनुष्य प्रवल वुद्धि-बल के होने पर भी जिन सब अद्भुत कामों के करने मे कुण्ठित होता है यह क्षुद्र कीट किसप्रकार सहजहि सम्पन्न कर लेते हैं; यह बात हमारी वुद्धि के गम्य हो नहीं है; परन्तु जिस सर्व-ज्ञ पुरुषने मनुष्यको अत्याश्चर्य्य वुद्धि-शक्ति प्रदानकी है उसे और जन्तुओंको भी ऐसी शक्ति दीहो तो क्या आश्चर्य्य है ? उस्की शक्ति अचिंत्य और महिमा अपार है ॥

संतोष और परिश्रम

लिविलपुर वासी विलियम रस्को सन्तोष और परिश्रम गुणका उत्तम उदाहरणहै। यद्यपि इस्का पिता निर्धन होने के कारण इस्को यथोचित शिक्षा नहीं करसका था; तथापि विलियम रस्को स्वाभाविक ही ऐसा सन्तोष और सुशील निकला, कि इसने केवल अपने ही यत्न और परिश्रम से, सुशिक्षित हो, यथेष्ट-ख्याति और सम्पदा प्राप्त करली, और लोरेन जो उमेजी और पोपदशमलियो इनदोनों के जीवन चरित्र रचना करके जगतमे अत्यन्त मानी होगया। इस पुरुष ने अपनी पहिली अवस्था का वृत्तान्त इस प्रकार लिखाहै; कि मैने बारह बरस की अवस्था मे पाठशाला छोड़ पिताके कृषि-कार्य्य मे सहायता करनी आरम्भ कीथी, एवं आलु ओंके खेतके बढ़ाने मे अत्यन्त परिश्रम किया, जब वे आलू पक जातेथे अपने सिर पर धर मंडी मे लाकर बेचताथा,

क्यों कि पिताने बेचने का सारा भार मुझ ही पर डाल रक्खा था, इस कारण मुझसे उसको बहुत उपकार देख पड़ता था। इसके सिवा इस प्रकार के और २ भी परिश्रम के काम थे, जिन्मे मेरा बहुत काल व्यतीत हुआ करता था और उस मे जो काल शेष रहता था वह पुस्तकों के पढ़ने से व्यतीत होता था, ऐसा करते २ मेरा शरीर तो सुस्थ और बलवान् होता रहा, और अन्तःकरण सुखी और ज्ञान-सम्पन्न हुआ। परिश्रमके पीछे जो अत्युत्तम मीठी २ नींद आती थी, वह नींद मेरे चित्तसे आज तक नहीं भूलती। यदि कोई पुरुष मुझसे पूछे कि जगत मे सुखी कौन है? मै यही उत्तर दूंगा कि जो अपने हाथसे हल चला कर स्वतन्त्रता सम्पादन करता है॥



हिम-शिला

जल शीतल होकर जमके हिम बनजाता है यह बात
सबही जानते हैं। शुद्ध-हिन्दी भाषा मे बरफ को ही हिम
शिला अथवा तुषार-शिला कहते हैं। इङ्-लेण्ड स्काट-
लेण्ड,नारवे,आदि शीतल देशों के नद, नदी, ह्रद,सरो-
वर सब जमकर ऐसे कठिन होजाते हैं, कि लोग उप
रसे दौड़ कूद कर भी चल फिर सक्तेहैं, कोई २ स्थान तो
बरफ के भीतर छिपा हुआ केवल श्वेत-वर्ण ही दिखाई
देताहै। पृथिवी के उत्तर और दक्षिण प्रान्तों पर,शीतता

के कारण सदा बरफ पड़ी रहती है। उत्तर-महा-समुद्र और दक्षिण-महासमुद्र के जम जाने के कारण उन्पर इतने ऊंचे, और प्रशस्त बरफ के ढेरों के ढेर दिखाई देते हैं कि लोग उन्हें हिम-द्वीप, वा हिम-पर्वत कहकर लिखते हैं। इस प्रस्ताव के आदि मे जिसका चित्रमय प्रतिरूप प्रकाश किया है इस भयानक स्तम्भ समान बरफ राशि मे कई अर्णव-यान, नाविक और मल्लाहों समेत, गिर कर नष्ट होगये हैं। १७७३ ईसवी मे १० दिसम्बर को जगद्विख्यात कुक साहिब दक्षिण महासमुद्र की एक प्रकाण्ड बरफ-राशि के बीच गिर पड़े थे जिसकी ऊंचाई प्रायः ३३ हाथ, और चौड़ाई प्रायः ३५०० हाथ की थी। फिर वह और एक पर्वता-कार बरफ-राशि के सम्मुख अपरान्ह के समय जाय पहुंचे जिसकी लम्बाई प्राय १३३० हाथ, और चौड़ाई प्रायः २९० हाथ, और वेध भी कम से कम १३३० हाथ होगा।

वे फिन-वे, नामक समुद्र-खण्ड मे प्रायः एक कोस के

लगभग अनेक बड़े २ बरफ के ढेर देखने में आते हैं जिनपर मन्दिर की चोटी की नाईं प्रायः ७० हाथ ऊंची एक २ चोटी देखी गई है। कहीं २ समुद्र इतने दूर तक बरफ से आवृत हो रहा है, कि मल्लाहों ने मस्तूलों के ऊपर चढ़कर देखा है तो भी अन्त नहीं पाया।

जब समुद्र जमकर कठिन हो जाता है तो ग्रीनलेण्ड निवासी एस्कीमो लोग उस पर जा, मत्स्य आदि सब प्रकार के जीव पकड़ लाते हैं और बरफ की अत्यन्त मसृणता के कारण रूस, लापलेण्ड, केनडा, आदि शीतल प्रदेशों के लोग एक प्रकार की चक्र-रहित गाड़ी बना, उस पर चढ़, अति वेग से उसपर चल फिर सके हैं।

यह समस्त पर्वताकार बरफ-राशि एक तो पहिले ही भयानक होती है, दूसरे परस्पर घर्षित हो, ऐसा प्रचण्ड और भीषण शब्द उत्पन्न करती है, कि उस समय

और कोई शब्द सुनाई नहीं देता। कहीं २ समुद्र की तरङ्गे उछल २ कर जो २ उन पर्वतों के ऊपर गिरती हैं सोही वह शीतसे कठिन हो, गृह मन्दिर-चूड़ा, आदि कई प्रकार के आकार धारण करती हुई कौतुहला-विष्ट जनों के नेत्रों को परम आनन्द सम्पादन करती हैं।

बरफ सदा श्वेत वर्ण दिखाई देती है, परन्तु कहीं २ जब उसपर सूर्य्य की किरणें पड़ती हैं तो धूसर, पीत, रक्त, आदि कई मनोहर वर्ण भी उसमें से दिखाई देते हैं। उस समय इसके देखने से जो अत्यन्त आनन्द, और परम आश्चर्य्य होता है वह कभी किसी को क्यों भूलता है। कभी २ जब इसपर सूर्य्य की किरणें गिरती हैं तब इसके चारों ओर का सब स्थान ज्योतिर्मय होजाता है।

यह विषय जिसप्रकार वर्णित हुआहै इसके पढ़ने से प्रतीत हो सकता है जो सब समुद्र वा जलाशय हिमसे आच्छन्न रहते हैं, उनमे जीव जन्तु कभी नहीं रह सकें, नष्ट होजाते होंगे; परन्तु करुणामय परमे-

श्वर ने इन सब सन्देहों को स्वयं ऐसी रीति से निराकरण कर दिया है कि उसने हिम-शिलाओं को जल की अपेक्षा इतना लघु बनाकर अपना अनिर्वचनीय कौशल प्रगट किया है, कि वह जल जन्तुओं को जल रूप निकेतन की छत रूप सा प्रतीत हो रहा है ये सब जीव तुषारमय छत के नीचे रहकर ऐसे सुख और स्वच्छन्दता से काल व्यतीत करते हैं कि शीत से पीड़ित होना तो दूर रहा, शिर पर तुषारमय आवरण होने के कारण ऊपर की अति शीतल पवन भी इनके अङ्गों को छू नहीं सक्ती। जगदीश्वर का कैसा आश्चर्य्य कौशल और कैसी अपार और अनिर्वचनीय महिमा है!

मुद्रा-यन्त्र

मनुष्यों के द्वारा जितने प्रकार के शिल्प-यन्त्र बने हैं उन सबों के बीच में से मुद्रा-यन्त्र के समान लाभकारी, और सब का उपकारक और कोई यन्त्र नहीं।

प्राचीन समय मे जब कोई ग्रन्थ-कर्त्ता ग्रन्थरचना करके उसे प्रचलित किया चाहताथा, तो वह सोवर्ष मे भी यथोचित मनोभिलाषा रूप आशा को पूर्ण नहीं कर सक्ताथा; परन्तु अब इनदिनों मे यदि कोई पुरुष अपनी कृति को प्रचलित किया चाहे तो एक मास के भीतर२ ही भू-मण्डलकी समस्त सभ्य-जाति यों के बीच उस को अच्छीरीत से व्याप्त करसक्ता है। किसी देश मे कोई विद्वान किसी नूतन विषय को प्रकट करे, अथवा किसी अभिनव तत्व को उद्भा-वन करे, तो वह उसे मुद्रा-यन्त्र के द्वारा मुद्रित करके तुरन्त और२ देशोंके पण्डितों के सामने उपस्थित कर सक्ता है। राज्य मे कर्म्म-चारी लोग आज कुछ काम राज्य अथवा प्रजाके विरुद्ध करें, तो वह दूसरे ही दिन संवाद-पत्रों मे छप सम्पूर्ण देशोंके बालकों तक भी प्रसिद्ध होजाता है; आजरात को जो शुभ अथवा अशुभ काम जगत मे होते हुए सुने गये हैं, वे सब

दूसरे ही दिन प्रातः काल लिपि-बद्ध हुए२ हार २ मे प्रगट होजाते हैं। सचतो यह है कि मुद्रा-यन्त्र की जबसे इस जगत मे उत्पत्ति हुई है, धर्म्म और नीति प्रचार के विषय मे युगान्तर होगया है इसमे कुछ संशय वा वितर्क नही।

किस प्रकार किसदिन से पहिले यह महोपकारी यन्त्र निकला, और फिर उत्तरोत्तर बढ़ता हुआ चला आयाहै, इसके जानने की सब को अभिलाषा उपजती है अत-एव इसस्थानमे बहुत संक्षेपके साथ उस विषयका कुछ२ वर्णन करता हूं।

सन ईस्वीकी नांवी शताब्दी के अन्त मे अथवा दशवीं शताब्दी के प्रारम्भ मे पहिले पहिल यद्यपि चीन देशके बीच इस प्रकार छापने की प्रथा निकली थी, परन्तु अब जैसे भिन्न२ सीसे के अक्षर जोड़ मेल कर, बड़े २ पुस्तक छापलेते हैं इन नियमों के वे अभि-ज्ञ नथे। उस समय मे जब कभी उन्हें कुछ छापना पड़ता था,

तो एक लकड़ी की पट्टी पर अक्षर खोद उसपर से छाप लिया करतेथे। यही कारणथा, कि उनदिनों में पुस्त कों के छापने तथा प्रचार करने में व्यय और काल की अधिकता अवश्यक होती थी और कुछ विशेष उपकार भी नहीं देखा जाताथा। जिसमहोपकारी सत्पुरुषने भिन्न २ अक्षर बना, उन्से पुस्तक आदिके छापने की युक्ति निकालप्रगटकी है उसीने इस आश्चर्य्य शिल्प-विद्या को मनुष्य-जाति के यथार्थ उपकारिणी कियाहै, प्रतीत होताहै कि यह रीति भी पहिले चीन देश मेंहि प्रगट हुईहै क्योंकि स्टानिसलास जुलियन नाम एक युरोप के पण्डितने जिनने इसविषय में प्रमाण सङ्ग्रहकिये हुए हैं उन्के पढ़ने से स्पष्ट प्रतीत होताहै कि १०४१ ईसवी से १०४८ तक ७ वर्ष के बीच२ किसी समय चीन देश के एक कर्म्म-कारने दग्ध-मृत्तिका से कई एक अक्षर बना व्यवहृत कियेथे; परन्तु युरोप में इस विषय की

अब जैसी उन्नति देखी जाती है, उसको वर्णन करते हुए चमत्कृत, और हत-बुद्धि, होजाना पड़ता है।
१८३९ ईस्वी से १८३९ पर्य्यन्त तीन वरसों के भीतर किसी न किसी समय ष्ट्रासवर्ग नगर के रहने वाले गेटनवर्ग और हायर्लेम नगर निवासी कोस्टर साहिब ने पृथक् २ छापने की विद्या प्रगट की थी। कोस्टर उक्त हायर्लेम नगर के समीप एक जङ्गल मे घूमरहा था कि उसने अचानक एक पेड़ की छाल पर कई एक अक्षर खोद, मसी से भर, एक सुन्दर पत्र के ऊपर छापकर देखा कि, सामान्य प्रचलित मसी के द्वारा पुस्तक छापने मे पत्र स्याही होजाता है और अक्षर भी परिष्कृत नहीं उठते, इस कारण और एक प्रकार घन मसी बना, एक लकड़ी की पट्टी पर कई एक शब्द खोद, उस मसी से एक पृष्ठ पर्य्यन्त सुन्दर रीति से छापना आरम्भ करदिया। अब इस अति उत्तम मुद्रा-यन्त्र के द्वारा इस भू-मण्डल मे जो हम ज्ञान और धर्म्म के प्रचार, सुख

ओर सच्छरता की वृद्धि, होती हुई देख रहे हैं यह काम पहिले पहिल दो एक मनुष्यों के कौतुक और विनोद का है।

पहिले पहिल गटनवर्ग और कोस्टर येदोनों पण्डित लकड़ी की पट्टीपर अक्षर खोद २ छापा करते थे पीछे से लकड़ी के भिन्न २ अक्षर बनाकर भी इन्होंनेही व्यवहृत कियेथे; परन्तु जबसे शेफर नाम एक शिल्प-कुशल बुद्धिमान पुरुषने धातु-निर्म्मित अक्षर प्रचलित किये हैं तबही से इस विषयकी अधिक श्री-वृद्धि देखने में आती है।

बहुत दिनों तक काष्ठ-निर्म्मित मुद्रा-यन्त्र ही व्यवहृत होता रहा, जबसे शिल्प-विद्या में अत्यन्त निपुण ष्टानहोप साहिब ने लोह-यन्त्र बनाया है तब से ज्ञान-प्रचार का पथ पहिले से बहुत अधिक परिष्कृत होगया है और यह मुद्रायन्त्र भी ष्टानहोप मुद्रा-यन्त्र कहलाता है। अनन्तर क्लाईमर कगर कोप रखवेन

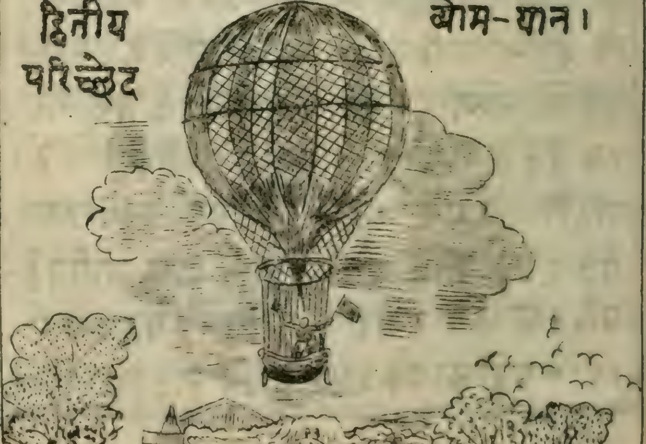
आदि अनेक पण्डितों ने इस यन्त्र को उत्तरोत्तर कुछ२ उन्नत किया।

यद्यपि उन सब मुद्रा-यन्त्रों से भी संवाद-पत्र आदि छपते रहे; परन्तु तिस्पर यूरोप के लोगों का चित्त, राजकीय कार्य्यों के संवाद शीघ्र२ न पंहुचने के कारण अत्यन्त सन्तुष्ट नहीं होता था; क्योंकि हाथों से काम करवाने पर कहांतक मन की अभिलाषा पूरी होसक्ती है। तब १८१४ ईस्वी में २८ नवम्बर को टाम्स नाम अङ्गरेजी पत्र पाठकों को प्राप्त हुआ, जो कोनिग साहिब ने कलिकत्ते की टंकशाला यन्त्र की नांई वाष्पीय यन्त्र से मुद्रित करके प्रचलित किया, इस पत्र के समस्त काम वाष्प के तेज से ही होते हैं। पहिले दिनों में प्रति-घण्टा इसके द्वारा ११०० खण्ड एक पृष्ठ छपते थे, अनन्तर कुछ काल व्यतीत होने पर, इसके किसी२ अंश के परिवर्त्तन करदेने से १८०० पत्रों का एक२ पृष्ठ मुद्रित होने लगा, १८१५

ईस्वी मे उक्त कोनिंग साहिब ने फिर एक उत्कृष्ट-तर प्रणाली निकाली, जिस्से प्रत्येक घण्टे मे १००० सहस्र पत्रों के दोनों २ पृष्ठ छपने लगे। अब आपलगाथ और कूपर इनदोनों अत्यन्त शिल्प-कुशल पुरुषोंने एकमति करके जो एक अद्भुत सुकौशल सम्पन्न वाष्पीय-मुद्रा-यन्त्र निर्म्माण किया है, यह कोनिंग साहिब के मुद्रा-यन्त्र की अपेक्षा भी अत्युत्तम है, इससे प्रतिघण्टा ५००० पृष्ठ छपसक्ती है।

द्वितीय परिच्छेद

व्योम-यान।



द्वितीय-परिच्छेद

अब इस देश के कई मनुष्यों ने वेलून-यन्त्र देखाहै, और जिसप्रकार से वह आकाश-मण्डल मे चढ़जाता है अपने नेत्र-गोचर कियाहै; परन्तु वह मनुष्यआदि भारी२ वस्तुओं के समेत कैसे ऊपर को चढ़ जाताहै, और गिर नहीं पड़ता, इन विषयों के जनाने के लिये, वेलून-सम्बन्धीय स्थूल विषयों का वर्णन यहां पर किया जाताहै।शुद्ध-हिन्दी भाषा मे वेलून को व्योम-यान कहते हैं।

जैसे कदम्ब-पुष्प की सब तिरियें उसकी ग्रन्थी को चारों ओर वेष्टन किये रहतीहैं वैसेही भू-मण्डल भी चारों ओर वायु-राशि के द्वारा परिवेष्टित हो रहाहै,जैसे मछली आदि जलके जीव समुद्र मे रहते हैं, वैसे ही मनुष्य, पशु, पक्षी, कीट, पतङ्ग आदि सब भू-चर और खेचर जन्तु इस वायु-समुद्र मे डूबे हुए हैं।जो सब वस्तु वायु से भारी होती हैं, वे वायु को भेद कर पृथ्वी

पर गिर पड़ती हैं और जो वायु की अपेक्षा लघु होती हैं, वे ऊपर की ओर चढ़ जाती हैं। जैसे लकड़ी जलकी अपेक्षा लघुता के कारण, जलमे डुबा देने से भी, जलके ऊपर उठ आती है, वैसे ही धूम, वाष्प, आदि समस्त वस्तु, जो पृथिवी के पास की पवन से लघु होती हैं वे वायु के बीच मे से हो, ऊपर को चढ़ जाती हैं। व्योम यान के ऊपर च ढ़ने का कारण भी यही है कि, इसमे एक प्रकार की ऐसी लघु वाष्प भरी रहती है जो वस्तु आदि सम्पूर्ण वस्तुओं समेत व्योम-यान और उसके आयतन समान वायु-राशि को पृथक् २ तोलें तो व्योम-यान उस वाष्प-राशि से भी लघु होता है अत-एव, वह वायु को भेद, ऊपर को चढ़ जाता है। जैसे एक जल सूकी हुई भारी लकड़ी के साथ और एक बोझा लटका देने से, वह लकड़ी जल के ऊपर तैरती रहती है डूब नहीं जाती, वैसे ही व्योम-यान की वाष्प-राशि भी मनुष्य आदि भारी २ वस्तुओं के

समेत उस वायु-राशि के ऊपर तक चढ़ फेरा करतीहै। जैसे तैल आदि वस्तु जलके ऊपर २ रहतेहैं वैसेही धूम और मेघ भी अपनी वायुके ऊपर छत्र रूपसे बने रहते हैं व्योम-यान के ऊपर चढ़ने का कारण यही है॥

इस देशमे रबर्टसन और कार्ईट ये दोनों पहिले व्योम-यान के द्वारा आकाश मे चढ़े थे, परन्तु युरोपके लोगों मे से अब एक२ने इस विषय मे ऐसी घटना दिखाईहै, कि उन्की आकाश-यात्राका वृत्तान्त सुन, विस्मयान्वित और पुलकित होना पड़ताहै। राबरट और कार्ईट तो केवल अपना आनन्द लेने, और कौतुक दिखाने को ही आकाश मे चढ़े थे; परन्तु अब युरोप मे कई महात्मा विविध विद्याओं की उन्नति के लिये ऊपर के वायु-सम्बन्धि पदार्थों की परीक्षा करते हुए आकाश मण्डलमे फिरा करते हैं।

१८०८ ईसवी मे दो बड़े२ प्रधान पण्डित बायट और

गेल्यूसाक उपरिस्थ वायुके शैत्य उष्णत्व आदि गुणों की परीक्षा करनेके लिये, तथा तत्सम्बन्धीय पदार्थों के स्वरूप जानने के लिये, बहुत प्रकार के यन्त्र, पक्षी, पतङ्ग, कीट, आदि जीव, तथा और २ भिन्न २ उपकरण साथ लेकर उड़े थे उस बरस की ११ वीं अगस्त प्रातःकाल के दश बजे के समय फ्रांस देशकी राजधानी पारिस से व्योम-यान पर चढ़े, मेघों के बीचों बीच होते हुए प्रायः ७०० हाथ ऊंचे तक चले गये, और बहुत विषयोंकी परीक्षा करते २, ३ घण्टे तक आकाश-पथ में घूम घाम पारस नगर से प्रायः १२ कोस दूर पेरिवल ग्राममें जा उतरे। यद्यपि प्राचीन पण्डितों ने भी यह बात जानी हुई थी, ऊपर का पवन पृथिवी के निकट-वर्त्ती पवन से लघु और शीतल है; परन्तु बेलून रचना होजाने से तो उक्त दोनों साहिबों ने हस्तामलक करके दिखादिया है।

उक्त गेल्यूसाक साहिब फिर एक बार १४ वीं दिसंबर

को उसी वरस अपने कई एक मित्रों के अनुरोधसे अकेला आकाश-पथ मे चढ़ाथा, जिसदिन कि वह १५३६० हाथ, प्रायः दोकोस तक ऊपर को चढ़ा, और ऊपर की पवनके गुणोंकी परीक्षा करके उसने यह वताया, कि वहां का वायु ऐसा शीतल और लघु है, कि मेरे हाथ क्रम२से अवसन्न होने लगे, श्वास लेने मे महा-कष्ट प्रतीत होने लगा, और उस अति शुष्क वायु के सेवन करने से कण्ठ-देश ऐसा नीरस हुआ कि रोटी तक का खाना भी दुष्कर होगया। यह साहिव १४३७० और १४५२७ हाथ ऊपरकी पवन से दो वोतलें भर कर नीचे को ले आयेथे, जव उन्को परीक्षा कर के देखा तो नीचे की पवन मेजो२ पदार्थ जिस२ परिमाण से मिल रहाहै, ऊपर के पवन मे भी वही२ पदार्थ उतने२ परिमाण से मिला हुआ पाया, इससे सिद्ध हुआ कि सव स्थानों का पवन एकरूपहै।

इनदिनों मे ग्रीन नामक एक पुरुष ने इसविषय मे

अन्यान्न पडुना प्रकाश्य कीहै जो १८३८ सालतक २२८ वार व्योम-यान के द्वारा आकाश-पथ मेघूमा, और विशेषकरके उक्त वत्सर के नवम्बर महीने को जो एकवेर वह आकाश मे चढ़ा,तो उसे देख सब लोग विस्मया-पन्न होगयेथे। उसदिन हालेराउ और मङ्क्-मेसन, साहिब उसके साथथे,और उनकी आशा बहुत दूर तक जाने की थी, इसलिये वे एक पक्ष की आहार्य्य सामग्री साथ लेकर ७ वीं दसम्बर मध्यान्हके १॥ वजे लण्डननगर से चढ़े, और आग्नेय कोनकी ओर जाते२ नीचे अनेक ग्राम,और नगरों की शोभा देखते २ ४ वजे केजव २४ मिनट हुएथे,इङ्लेण्ड-भूमि को छोड़,समुद्र पर विचरने लगे,सायंकाल होते ही समुद्र के पार उतर,फ्रांस देश पर जानिक ले क्रम२से रात्रि बहुत होगई,अन्धेरा चारों ओर छाग या,परन्तु वे पृथिवी के तल पर ना उतरे अपने ऊप र तो आकाश को नक्षत्रों से पूर्ण,और नीचे भूमण्ड ल

को दीप-माला से मण्डित देखकर पुलकित होतेथे, वे ऐसे लुक छिप कर चुपचापनेभो-मण्डलमें लोगों करके अपरि- ज्ञात स्वर्गीय देवताओं की नाईं कई राजधानियें, नगर, नद, नदी, ग्राम, अट्टालिका, उद्यान आदि देखते हुए और अतुल आनन्द भोगते हुए, अन्त-मार्ग के वीच सारी रात्रि घूमते रहैं, वे कहते हैं कि अई रात्रि के समय हमें इतना शीत भोगना पड़ाथा कि, व्योमयानकी सब वस्तु,जल तेल आदि, जमकर कठिन होगई थी, और प्रभात के समय एक ऐसा परम-कौतुकजनकव्यापार देखाथा कि, कभी तो ऊपर की ओर आकाश मे कुछ दूर तक चढ़के सूर्योदय और तत्सङ्गत आश्चर्य्य-शोभा को देखते, और फिर नीचेकी ओर उतर अंधेरे मे आवृत होतेथे। उसदिन तीन वेर सूर्योदय और दो वार सूर्य्यास्त होतेहुए देखा"। सच पूछो तो उस दिन विन्होंने जो अत्याश्चर्य्य सुरम्य व्यापार देखाथा, वह सामान्यरूपसे वर्णन नहीं होसकता

था। इसी प्रकार कमसेकम २२० कोस शून्य-मार्ग मे विचरण करके सारी रात तो परम-सुखसे ब्यतीत की, दूसरे दिन जर्म्मणी के बीच नोसोउस्लिवर्ग मे उतरे और सभाओं मे बड़ी २ प्रतिष्ठा प्राप्त करके ख्याति लाभकी ।

ऊपर के इन दो कामों के सिवा, और एक प्रकार के प्रयोजन सिद्ध करने के लिये भी चार पांच वेर ब्योमयान ब्यवहार मे लाया गया है। १७३९ ईसवी मे फ्रांस देश मे जो महा-भयानक सङ्ग्राम हुआथा, उसमे सेना के बड़े २ बुद्धिमान शिल्प-कुशल लोग ब्योमयान पर चढ़, ऊपर २ ही शत्रुओं का सारा ब्यवहार और रीति नीति देख आया करतेथे। १७९४ ईसवीमे फ्लिउरस नाम स्थानमे आस्त्रिया की सेना के साथ, फ्रांसीसों के सेना पति जोर्डान साहिब का युद्ध हुआथा, जिससे कर्णल कुतेल साहिब एक सेनाके कर्म्म-चारी पुरुष को साथ ले, ब्योमयान पर चढ़, युद्ध के समय,

तथा उसके पहिले भी शत्रुओं के युद्ध-सम्बन्धी सबव्या पारोंको देख२ इङ्गि-तों के द्वारा जोर्डीन साहिबको जताते रहे थे, और उसने तदनुसार काम कर के, शत्रुओं को पराजय करदिया। कर्णेलकुतेल साहिब फिर एक दो बार अपने कर्म्म-चारीसाथीओं को साथ लेकर ८-२६ हाथ तक ऊंचे चढ़ेथे, विपक्ष लोगों ने पहिले एक वेर तो उन्हें न देखा, जब दूसरीवेर देखा तो बड़े२ भारी गोले मारने आरम्भ किये; परन्तु कर्णेल कुतेल साहिबने उसीक्षण व्योम-यानको इतना ऊंचाकरलिया, कि वहां तक किसी गोले की पहुंच नथी। कर्नेल-कुतेल साहिब, और दो एकबार अन्य२ युद्धों मे इस बड़े अनुपम साहस के काम मे नियुक्त कियेगयेथे।

माता पिता के प्रति व्यवहार

जिन परम-पूज्य भक्ति-भाजन मातापिता ने हमको जन्म दियाहै और पाला पोसाहै और सबप्रकार से सुख बढ़ाने के लिये प्राणोंतक भी व्यय करने मे संकोच

नंही किया, जहांतक होसका है हमारे सुख और स्वाधीनता को बढ़ा कर ही प्रसन्नता लाभ की है उन्मे भक्ति श्रद्धा प्रकाश करनी, और जहांतक होसके उन्का प्रत्युपकार करना, क्या हमारा आवश्यक कर्म्म नहीं है?

परम-पूज्य पिता अपनी सन्तान के शिक्षित, विनीत, और सभ्यतावान करने मे यथा-शक्ति चेष्टा करता है, उस्के सत-चरित्र और पण्डित होनेसे ही अपने को कृतार्थ मानता है, पुत्र के कृती, यशस्वी, और सुखी, होनेसेही अपने आपको सुखी जानता है, पुत्रका जगत मे यश और प्रशंसा सुन के अन्तःकरनमे आनन्दित हुआ २ आह्लादसे नाचता है, जो अपने से अन्य को अधिक विद्वान् यशस्वी और धनी देख कर विद्वेष और मत्सरता प्रकाश करता है वही अपनेसे अपने पुत्रका धन, मान, यश, और विद्या, देख अत्यन्त सुखी होता है आहा! स्नेह क्या उत्तम और मीठी वस्तु है!

प्रत्यक्ष देवता स्वरूपा माता पिता से भी अधिक

प्यारी सन्तान के शुभ के लिये जैसा यत्न करती है, और क्लेशों को सहती है उसको स्मरण करके किस पुरुष के हृदय में भक्ति-रस प्रकट नहीं होता, और नेत्रों से प्रेमाश्रुओं की धारा नहीं बहती, और शरीर

रोमाञ्चित नहीं होजाता ? माता अपने पुत्र के दुःख के समय दुःख, विपदा के समय विपदा, भोगती है। दुग्ध-पोष्य सन्तान के पीड़ित होने पर जैसे आप भी पीड़ित की नाईं सारा व्यवहार करती है ऐसा कौन पुरुष है जो नहीं जानता ? माता अपनी सन्तान के लिये क्या नहीं करती, अपने शरीर से निकले हुए दूध का पान करा कर उसको पालती हुई और अन्याश्चर्य अपूर्व स्नेह का सञ्चार करके उसके सुख, और स्वास्थ्य को बढ़ाती हुई, उसी के - कल्याण करने के अर्थ जीवन तक समर्पण करदेने मे भी अनिच्छा प्रकाश नहीं करती। इस प्रकार का विशेष-प्रेम और नितान्त स्वार्थ-शून्य स्नेह का दृष्टान्त

पृथ्वी भर में और कहीं नहीं। जो हमारे ऐसे शुभ-चिन्तक हैं उन्से किस प्रकार वर्त्तना चाहिये, और कहां तक उन्की शुश्रूषा कर्नी चाहिये इसको हम पूरा २ क्योंकर लिख सक्ते हैं ? जिस्का चित्त स्वाभाविक ही धर्म्म में अनु-राग करने वाला, और दया भक्ति से भरा-पूरा है वही प्रतीत कर सक्ता है कि माता पिता की कितनी बड़ी महिमा है, और उन्के दुःख दूर करने और सुख व पाने से हमारा जीवन सफल होता है। वही जानता है कि तन मन से इन्की आज्ञा में रहना और अकृत्रिम-भक्ति प्रकाश करके यथा-शक्ति उन्का प्रत्युपकार, कर ना मनुष्य मात्र को उचित है माता पिता के प्रति मनुष्य का जो कर्त्तव्य-कर्म्म है, वह इन्हीं दोनों नीति-सूत्रों के वीच में आजाता है।

दिग्दर्शन-यन्त्र ।

यह बात सब जानते हैं कि चुम्बक लोहे को खींचता है। चुम्बक दो प्रकार का होता है कृत्रिम, और अकृ-

त्रिम। खानि से जो पहिलेही एक समल लोहा निकसताहै उस्को अकृत्रिम चुम्बक कहते हैं, अकृत्रिम चुम्बक के साथ जब लोहा अथवा इस्पात धातुको घिसतेहैं तब उस लोहे और इस्पात मे भी चुंबक का गुणआजाताहै उस्को कृत्रिम चुम्बक कहतेहैं।

अकृत्रिम चुंबक की नाईं कृत्रिम चुंबक भी लोहा और इस्पात को खींच सक्ताहै, सिवा इन दोके विकल और कोवाल्ट इनदोधातुओं कोभी अकृत्रिम-चुंबक सेघिसें तो येभी उस्काआकर्षण गुण धारण कर लेतीहैं।

चुंबक की सलाई मे और एक प्रकार का विशेष-गुण यह होताहै कि, वह एक ओर से सदा उत्तरा- भि-मुख, और दूसरी ओरसे दक्षिणा-भिमुख रहतीहै इसी कारण से यदि एक चुंबक की शलाका पा सके, तो क्या महा-समुद्र, क्या गह्वर-बन, सबस्थानों मे सहज ही सबदिशा प्रतीत होसक्तीहैं। चुंबक मे इस असा-धारण गुण के होने सेही एक यन्त्र बना है, जिस्को दिग्

पीन कहते हैं इसयन्त्र के द्वारा नाविक लोग सब स्था नों मे दिशा प्रतीत कर लेते हैं क्योंकि इस यन्त्र के वीच ऐसे बड़े कौशल के साथ एक अकृत्रिम चुंबक की सूई लगी हुई रहती है, जो सब ओर फिर सके इसशला- का का एक प्रान्त सदा उत्तर की ओर ही रहता है, इसकारण उत्तर-दिशा के अत्यन्त निर्यन्त्र जान लेने के कारण ओर सब दिशाभी अपने आप प्रतीत हो सक्ती हैं।



प्राय: १९०० वर्ष के हुआ है, कि पहिले पहिल चीन के लोगों को चुंबक का यह विशेष गुण विदित था, और उस गुण को व- र्तीव मे भी लाते थे। इनसे हिन्दुओं ने, हिन्दुओं से अरवी लोगों ने, और अरब के लोगों से तेहरवीं शताब्दी मे

यह अपूर्व हित-कारी विद्या युरोपके लोगों ने सीखी, और यह यन्त्र बनाया।
इस के बन जाने से पोत चलाने की विद्या जिस उन्नति के शिखर पर चढ़ी जाती है, क्या वर्णन करें। इसयन्त्र के पास होने से दिशाओं का भ्रम तो कदाचित नहीं होता इसी कारण लोग जहाज़ों पर चढ़, बड़े २ समुद्रों के पार उतर, दूर२ देशों मे जाने आने लगे हैं, सागरों से वेष्टित द्वीपों मे भ्रमण करके अनेक प्रकार के नये २ व्यापारों को देख २ अपने आपको आनन्दित, और देशका मङ्गलकर रहे हैं, भूमण्डल के सब भागों मे वाणिज्यफैला कर लोगों के सुखकी अवस्था को प्रतिवृद्धी ला रहे हैं, नाना देशोंके पशु, पक्षी, उद्भिद और धातु आदिका स्वभाव और गुण जान, प्राणि-विद्या, उद्भिद्-विद्या, और धातु-विद्याकीभी अत्यन्त वृद्धि करके दिखला रहे हैं। इसी यन्त्रकी सहायता से कई अति-चतुर नाविकों ने पृथिवी की एक सीमा

से दूसरी सीमा पर्य्यन्त यात्राकी है। मेजेलन ड्रेकु आदि कई प्रधान २ नाविक सारी पृथिवी की प्रदक्षिणा करके अपने देशों मे प्रतिष्ठास्पद हुए हैं। अमेरिका देश के प्रकट करने वाले जगद्विख्यात महात्मा कलम्बस की भी अतुल-कीर्त्ति, और अनुपम-प्रतिष्ठा इसी यन्त्र की सहायतासे हुई है। यह इसी यन्त्रका प्रभावहै, जो दूर-वर्त्ती देश, परस्पर निकट-वर्त्ती हुएहैं और विदेश भी स्वदेशकी नांई प्रतीत होने लगाहै।

असाधारण अध्यवसाय।

इङ्गलैण्ड मे डिविसिया वासी विलियम डेवी ने एक बड़ी भारी पुस्तक २८ भागों मे प्रस्तुतकी थी, और उसको छापकर देशमे प्रकाशकरने के लिये चन्दाकरना आरम्भ कियाथा, परन्तु उसने चन्देसे उपयुक्त धन इकट्ठा होना असम्भव जान नाचार और कोई उपाय न देख कर, "प्रतिज्ञाकी" मै अपने हाथ से स्वयं इस पुस्तक को छापूंगा" यह प्रतिज्ञा करके उसने

अपना एक मुद्रा-यन्त्र बनाया, और बड़े यत्नसे कि
सीप्रकार कितने एक पुराने अक्षर इकट्ठे करके पुस्तक
छापना आरम्भ करदिया यद्यपि वे अक्षर इतने थोड़े थे,
कि उनसे एकवार दो पृष्ठ से अधिक नहीं छप सक्ती थीं।
तोभी वह इतनी ही सामग्री ले, १७९५ ईसवी मे अपने
अत्यन्त अभिलषित शुभ-कार्य्य के करने मे तत्पर हुआ।
उसके उस समय के परिश्रम और सहिष्णुताकी कहां तक
वर्णना करें ? अक्षर योजना से लेकर छाप देने तक
का सारा काम उसने अपने हाथोंसे ही करना आरम्भ
किया, पहले उसने प्रत्येक भाग ४० प्रत छापने का सङ्क
ल्प किया था, किंतौ नसौ ३०० पृष्ठ तक छाप बड़े २
प्रधान विद्या-लयों मे, तथा किसी २ धर्म्म-प्रचारक और
समाचार-पत्र प्रचार करने वाले के पास भेज दे वे कि
वह पुस्तक साधारण लोगोंका उपकारी होकर, समा
दृत और परिगृहीत होवे, परन्तु इस आशाको भी
विफल देख, उसने अपने उत्साह, और अध्यवसाय को विफ

लन किया लोगों से आदर और सहायता की आशा को छोड़ छाड़, प्रत्येक भाग के ५ चौदह २ खण्ड छापने का सङ्कल्प किया, और प्रायः बारह वर्ष में २८ भाग छापकर पूरे कर डाले। तब लोग उसके यत्न, उत्साह और अध्यवसाय की बार २ स्तुति करने और उसके पुस्तक का भी यथेष्ट आदर करने लगे। हे विद्यार्थियो! विद्यार्थी दशा में तुम को भी ऐसा ही यत्न और अध्यवसाय आश्रय करना उचित है।

प्रवाल-कीट



हमलोग जो प्रवाल अर्थात् पला वर्त्तने मे लाते हैं ये सब प्रवाल नाम एक प्रकार का कीट है उसके पञ्जर हैं। इनका स्वभाव और शरीर की आकृति के देखने से तो ये अकिञ्चित्कर सामान्य कीड़े प्रतीत होते हैं, परन्तु ये जो बड़े २ काम करते हैं अर्थात् नये २ द्वीप रचदेते हैं इस बात के सुनने से अवाक् हो जाना पड़ता है। ये कीड़े बहुत प्रकार के होते हैं, उनमें से चार प्रकार के कीड़ों का प्रतिरूप ऊपर दिखाया है। तीन तो ठीक उद्भिद की नांई, और एक मनुष्य के मुख की नांई है। पहिले लोग प्रवाल को भी एक प्रकार का उद्भिद् ही जानते थे, इसी कारण संस्कृत के प्राचीन ग्रन्थों मे इसको लता-मणि, वा रत्न-वृक्ष नाम से लिखा है। एक सौ वर्ष के लगभग हुआ है मार्सेलिस नगर-वासी पेसोनेल्स नाम युरोपीय पण्डित ने ठीक निश्चय किया है, कि यह क्या है। १७२० ईस्वी मे वह इस विषय का तत्त्व देखने को प्रवृत्त हुआ था, तीस बरस निरन्तर इसी काम मे लगा

रहा, कई प्रकारकी परीक्षा करते २ उसने यह निश्चय किया, कि मोंगा एक प्रकार का प्राणीहै उद्भिद् नहीं। ये प्राणी समुद्रों मे रहते हैं, और इकट्ठे होकर नये २ द्वीप निर्म्माण करते हैं।

इन्के शरीर से दूध की नांई एक प्रकारका रस निकसताहै जो निकसते ही शम्बुक आदि जीवोंके ऊपर के छिलके की नांई महा कठिन हो, प्रवाल-कीटों के शरीर का आवरण वनजाताहै वहुत लोग उसी आवरण को इन्के रहनेका घर कहते हैं। किसप्रकार इन्के शरीर मेसे यह रस निकसताहै,

इसवात कोआजतक नतो कोई जान सकाहै, और न इस रसके समान रसही वना सकाहै। यही रस कठिन होते २ ऐसा दृढ़ होजाताहै, कि समुद्र का प्रवल-प्रवाह और वड़ी २ भयानक तरङ्गें नतो उसको कंपा सक्ती हैं, और न एक स्थानसे दूसरे स्थान मे दोचलायमान कर सक्ती हैं। क्रम २ से इकट्ठा होते २

वह ऐसा दृढ़ और इतना बड़ा होजाताहै कि लोग उसे प्रवाल-द्वीप कहने लगजाते हैं।

प्रवालकीट बहुधा सब बड़े२ समुद्रों मेही जन्मधारण करतेहैं; परन्तु यूरोप के दक्खनी भू-मध्यसागर मे जो उत्पन्न होतेहैं इन्का शरीर देखनेमे महा-सुन्दर, और अति मनोरम होताहै।

यदि कोई पुरुष इन्की उत्तम रचना प्रणाली देखना चाहै, तो वह स्थिर-समुद्र मे जाकर देखे, जहां के कई प्रवाल-द्वीप, प्रवाल-शैल, और प्रवाल-स्तम्भ आदि विद्यमान हैं। यही कारण है कि बहुत लोग उस्को प्रवाल-समुद्र कहते हैं। इस प्रवाल-समुद्र के बीच मे प्रवाल-कीटों के बनाये हुए कई एक बड़े२ द्वीपहैं, जिन्के मैत्र-द्वीप, नाविक-द्वीप, और सामाजिक-द्वीप आदि नामहैं इन सब द्वीपों मे बहुत लोग बसते हैं, जो अपना२ कृषि कर्म्म करके उसमे कई प्रकार के फल, मूल, शस्य आदि भी उत्पन्न करलेते हैं।

स्थिर-समुद्र के भीतर जो कई एक पर्वत डूबे हुए हैं उन्पर भी कई प्रवाल-कीट इकट्ठे होकर लिपटे रह ते हैं। और उन्के शरीर से भी पूर्वोक्त श्वेत वर्ण द्रव की नाईं रस निकलता रहता है, और वह रस क्रम२ से कठिन हो उन्का गात्रावरण बन जाता है। जब वे मरजाते हैं, तो वही सब कुछ पत्थर की नाईं कठिन और दृढ़ होजाता है। पीछे और२ जीवित प्रवाल-कीट वहां आ कर फिर वही काम करने लगते हैं। ऐसे ही असंख्य प्रवाल-कीटों के शरीर इकट्ठे होते२ एक प्रवाल-द्वीप बन जाता है।

ऐसे ही ऊंचा होते२ जब इतना बड़ा होजाता है कि, भाटा भी उस्के शिखर तक नहीं पहुंच सक्ता, तब प्रवाल-कीट उस्पर नहीं चढ़ते। फिर ज्वार के सम य शंख, शम्बुक प्रवाल, बालुका आदि जो सब पदा र्थ उस पर आ गिरते हैं, वे तरङ्गों से टूट फूट इकट्ठे हो, पत्थर के तुल्य बन जाते हैं। जब फिर उन्हीं प्रस्त-

रों का अनुग्रह पूर्ण लगतीहै, तोवे फट कर खण्ड२
बने, फिर ज्वार के समय इधर उधर चलाय मान हो,
उलटे पलटे हो जाते हैं, और उनमें जो बड़े २ गढ़े
पड़ जाते हैं वे कई प्रकार के जल-जीव, और सामुद्रि
क पदार्थों से भरे जाकर बालू आदि के गिरने से
अति उत्तम उर्वरा पृथिवी रूपमें परिणत होजाते हैं।
फिर तो कई प्रकार के वृक्षों के बीज तरङ्गों
के साथ लगे हुए वहां आ, अङ्कुरित हो, परिणाम में
वृक्ष बन, सुशीतल छायासे उस जल-भूमिको शीत
ल करते हैं। क्रम२से सामुद्रिक जीव, और पक्षी भी
वहां आने लगते हैं, और पथ-भ्रान्त स्थल-चर पक्षी
भी आकर, उसी स्थान को अपना आश्रय बनाने लेते
हैं। अनन्तर और २ द्वीप और देशों के निवासी मनुष्य,
इस नये द्वीप में आकर अपनी कुटिया बना, खेती
बारी कर, इसके राजा बन बयठते हैं। किसी समय
जहां पर गम्भीर समुद्र का गर्भ होताथा, वंही

पर एक सामान्य क्षुद्र कीटों करके बनाया हुआ, मनुष्य, पशु, पक्षी आदि जीवों के रहने के योग्य द्वीप, बन, विश्व-पति की अनन्त-महिमा, और अद्भुत-कौशल को दिखलाता है ?

इन सब प्रवाल-कीटों के आयतन समान नहीं। कप्तान बीची साहिबने ३२ प्रवाल-द्वीप मापे थे, जिनमे सबसे बडा प्रायः ५ कोश लम्बा, और सबसे छोटा प्रायः आधे कोश के लगभग था। कोई २ प्रवाल-द्वीप बहुत ऊंचे होजाते हैं मालडेन द्वीप समुद्रकी पृष्ठसे ५२ हाथ ऊंचा है और मेटिया नाम प्रवाल-द्वीप जो एक स्थान रकद्वे हैं, उसमे एक समुद्र से १२ हाथ ऊंचा है।

प्रवाल-द्वीप लवण-युक्त समुद्र मे उत्पन्न होते हैं, और चारों ओर वैसे ही जल से परिवेष्टित रहते हैं। और एक यह बड़ा आश्चर्य है, कि उस जल के ३।४ फ़ुट नीचे फिर अत्यन्त स्वादु और मीठा जल निक-

लता है। ज्वार का जल जितना ऊंचा चढ़ताहै, उसके दो तीन हाथ नीचे काजल शुद्ध और मीठा होताहै। पदार्थ विद्या मेंकुशल पण्डितलोग यह अनुमान करतेहैं कि, वहां लवन जल प्रवाल के गुण से ऐसा सुस्वादु और परिशुद्ध हो जाताहै।

प्रवाल-कीटकी इस चित्र-चमत्कारणी महीयसी कीर्ति को विचारते २ विस्मय के समुद्र मे डूब जाना पड़ताहै। जिन मनुष्यों ने सहस्रों वर्ष पीछे इस भू-मण्डल मे जन्म-ग्रहण करनाहै, उन पुरुषों के लिये वास-गृह बनानेमें ये अत्यन्त छोटे २ कीट अभीसे शीघ्रता कर रहे हैं। ये अत्यन्त अज्ञानान्ध और मनुष्य के तुल्य बुद्धि और चातुर्य्य के न रखने वाले जीव, किस प्रकार ऐसे २ अपूर्व, और कौशल-सम्पन्न कामों को कर रहे है, हमारी बुद्धि और विचार मे कुछ नहीं आता? ये ऐसे छोटे २ अकिञ्चित्कर प्राणी, जो इतने २ बड़े द्वीप बनाने मे लगे हुए हैं, क्या इनका

कुछ स्वार्थ है ? किस कारणसे, वा किसप्रकार से कोटानुकोट जीव मनुष्य करके एक स्थानमे इकट्ठे हो जाते हैं ? किसप्रकार वे इस बड़े भारी व्यापारमे प्रवृत्त होकर, अगाध-समुद्र के प्रबल-प्रवाह और भयानक तरङ्गों को अतिक्रम करते हैं ? इन सब प्रश्नोंका उत्तर यही है कि वे भला बुरा तो कुछ नहीं समझते, परन्तु अपने स्रष्टा से जो एक स्वभाव-सिद्ध संस्कार प्राप्त हुआ है उसके अनुसार काम करते हुए उसकी अनिर्वचनीय महिमा, और आश्चर्य महात्म्य की घोषणा कर रहे हैं।

स्मरण-शक्ति का उदाहरण

इटली देश निवासी मेग्लियाबेरिव की स्मारकता शक्ति ऐसी थी कि उसे जो सुनता है आश्चर्य रहजाता है। इस विद्वान के समय मे जितनी प्राचीन पुस्तकें थी, और जो उनदिनों मे प्रचलित होती जाती थी प्रायः वेसब

कीसब एक वेर इस्के दृष्टि गोचर हुई रथी। जिस पुस्तक मे जिस प्रस्ताव का जैसा वर्णन था, मेग्लियारेबि उस प्रस्ताव को उससे भी अधिक व्याख्यान कर सक्ता था, किसी विषय का प्रसङ्ग उठाओ, वह विषय जिस पुस्तक के जिस अध्याय और जिस पृष्ठ और जिस स्थान मे जैसा वर्णन किया हुआ हो, वह यथा वत कह देने को समर्थ था।

किसी समय एक पण्डितने किसी विषय मे बड़ा लम्बा प्रस्ताव लिख कर मेग्लियारेवि कीस्मरण-शक्ति परीक्षा करने के अर्थ, उसे पढ़ने को दिया, और मेग्लियारेविने पढ़ कर उसी समय फिर लौटा दिया तब प्रस्ताव रचना करने वाले ने फिर आन कर ऐसा कहा। कि मित्र! बड़े शोककी बात है कि, मैने बड़े परिश्रमसे जो प्रस्ताव लिखाथा, वह किसी प्रकार से खो गयाहै तुमने भी तो पढ़ा था, यदि कुछ स्मरण रहा हो तो कृपा करके "मुझे लिखदो" वेग्लि यह बात सुन,

हंस कर बोला, मित्र! 'बहुत अच्छा' मैं कहता जाता हूं तुम लिखो जों का त्यों पूरा२ लिखवा दिया। तब तो परीक्षक प्रस्ताव-रचयिता उसकी इस असाधारण स्मरण-शक्ति की बार२ प्रशंसा करता हुआ, विस्मयान्वित हो, चला गया।

एक बड़ा प्रसिद्ध गणित-विद्यामें महा-पण्डित वीलर साहिब पुस्तक और समाचार-पत्र आदि पढ़ता२ अन्ध होगया था, अन्धा होनेके पीछे इस महात्माने बीज-गणित, दो एक और अङ्क-विद्या की पुस्तकें बनाईं जिनमें बड़े२ कठिन अङ्क सिद्ध करके दिखाये; यद्यपि यह महात्मा अन्ध होनेके कारण पट्टी अथवा पत्रपर अङ्कों की गणना नहीं कर सकता था; परन्तु इसकी स्मरण-शक्ति ऐसी तेजस्विनी हुई२ थी कि, कितना ही बड़ा लम्बा अथवा महा-कठिन अङ्क क्यों न हो, मनही में गिन, बता देताथा उस समय के पण्डित उसकी इस-शक्ति को देख,२ आश्चर्य हो, उसकी अत्यन्त प्रशंसा करते, और बार२ धन्य-

बाद देतेथे। यह मनुष्य युनानी और रोमी भाषामें बड़ा पण्डितथा। महा-कवि वर्जिल प्रणीत इनेयिड काव्य इसको ऐसा अभ्यस्तथा, कि विना पुस्तक देखे, यह आद्यो-पान्त पढ़ सक्ताथा। उनदिनों में जितनी काव्य की पुस्तकें व्यवहृतथीं, वे सबकी सब उसको प्रत्यक्षर कण्ठथीं।

परिश्रम।

पशु पक्षी आदि प्राणी, जैसे अन्न, जल, तथा निवासस्थान आदि उपयोगी सामग्रियें विना अधिक यत्न के सम्पादन करसक्ते हैं, मनुष्य वैसे नहीं करसक्ता। जगदीश्वर ने उन सब वस्तुओं को यत्नद्वारा प्रस्तुत करनेमे मनुष्यको सब प्रकार से उपयोगी बनायाहै, और सङ्केत से यह समझादियाहै कि, मनुष्य, अपने शरीर और मनको परिचालन करके, अपनी जीवका का निर्वाह और सरल स्वच्छन्दताको लाभकरे यह सब के कल्याण करने वाली अनुमति उसने सब स्थान मे

प्रचार कर रक्खी है, इसके पालने मे ही सुख, और लङ्घ न करने मे ही दुःख है। बहुत लोग परिश्रम को केवल क्लेश-कर जानते हैं, परन्तु ऐसा विचार करना अत्यन्त भ्रान्ति का काम है। परिश्रम का चरम फल तो कल्याण ही है। परम-शोभा-कर अट्टालिये, जिनमे अति-सुन्दर फूल खिले हुए हों, ऐसी फूल वाड़ीयों कर के पूर्ण उद्यान, अत्यन्त सुन्दर सामग्रियों से भरी हुई आपण-श्रेणियें, विद्युत समान वेगवाले वाष्प-सम्बन्धी पोत, वाष्पीय-रथ, अत्यन्त पवित्र धर्म्मोपदेश करने के स्थान, ज्ञान रूप रत्नों की खानि विद्या-लय, और पृथिवी के ज्ञानियों के ज्ञान की समष्टि रूप पुस्तकालय आदि, सम्पूर्ण, शुभ-कर पदार्थ, कायिक और मानसिक परिश्रम की साक्षता प्रदान कर रहे हैं।

परिश्रम करने से जो२ सुख प्राप्त होते हैं, विवेचकों को यह बात सहज ही प्रतीत हो जाती है।

अनेक देशों के ग्रन्थ-कारों ने आलस्य की वार२ निन्दा

की है परिश्रम केवल करनेके पीछे ही सुख नहीं
देता, वरन कर्म्म करनेके साथ २ ही इसका विशुद्ध
सुख देता, और अङ्ग सञ्चालन के साथ २
ही स्फूर्त्तिका लाभ, और हर्ष का उदय भी होता हुआ
प्रतीत होता जाता है, इस बात को बालक विशेष करके
अनुभव करसक्ते हैं, जो एक घड़ी मात्र भी स्थिर होकर
नहीं बैठ सक्ते; चलना, फिरना, कूदना, दौड़ना आदिक
मों के करने से ही आल्हादित होते हैं और विना परिश्र
म एक दिन भी नहीं काट सक्ते। जिन लोगों का ऐसा का
म है, कि उसमें अङ्गों के परिचालना की आवश्यकता
नहीं; चिकित्सा-शास्त्र के पण्डित उनको व्यायाम करने,
तथा और किसी न किसी प्रकार अङ्गों के सञ्चालन
करनेका उपदेश देते रहते हैं, और कहते रहते हैं कि
यदि तुम अङ्ग-चालन न करोगे तो मनकी सारी वृत्तियें
जिनसे प्रगाढ़-सुख भोगने की आशा है, निस्तेज हो
जावेंगी, और उनके सुखसे वञ्चित रह जाओगे। प्रत्येक

अङ्ग-और प्रत्येक मनकी वृत्ति सुख सलिलका स्रोत है,
इन्को सब प्रकारसे सतेज करो, जितना सतेज करोगे,
उतनाही सुख का स्रोत खुला होगा, और आनन्द-
धारा अनवरत चलेगी परिश्रम करने की आवश्यक
ता हमारे स्वभाव-पट मे स्पष्ट लिखी हुई है।
ऐसे पुरुष भी बहुत हैं, जो लोगों की स्वास्थ्यरक्षाके
उपयोगी अवश्य हितकारी कामोंको क्लेश देनेवाले,
और बुरे समझते हैं, और जो सब अनावश्यक और अली
क काम हैं उन्को भद्र लोगों के कर्त्तव्य, और सुख दायक
समझते हैं जैसे कृषि और शिल्पको निषिद्ध, और मृग
याम प्रवृत्त होकर पशु-वध आदि को विहित समझते
हैं, छोटे २ जलाशयों के किनारों पर, सूर्य्य का ताप
और कष्ट को सहते हुए क्षुद्र जलमे आनन्द के साथ
विनोद करती हुई श्वेत-वर्ण मछलियोंके ऊपर क्रूर
दृष्टि करके उन्की हिंसा को विहित कर्म्म, और जनों के
अत्यन्त-उपकारक, और आवश्यक कृषि आदि कामों

को कष्ट-दायक और नीच-वृत्ति समझते हैं ।

जिस समय मनुष्य की बुद्धि-वृत्ति और धर्म्म-प्रवृत्ति प्रबल होती हैं, उस समय तो वह उचित कामों मे लगक र मनुष्यों की भलाई मे लगता है, और जब इस्की निकृष्ट वृत्तियें बलवती होती हैं, तो पशुओं की नांई निकृष्ट कामों मे लगकर बुराईयों मे प्रवृत्त होजाता है ।

जन समुदाय की बुराईयों मे लगे रहना अविवेचक, और अदूर-दर्शी लोगों का काम है परमेश्वर का कभी इच्छित नहीं, उस्के नियम के सब प्रकार विरुद्ध है ।

जब हमारा लोगों के निर्वाहक कामों मे प्रवृत्त होना सब प्रकार से उस्का अभिप्रेत है तो हमें भी यही उचित है कि, उस्के प्रतिकूल निंदनीय कामों मे कभी प्रवृत्त न होवें ।

जिस वृत्ति का आश्रय करनेसे, बुद्धि-वृत्ति और धर्म्म प्रवृत्ति चरितार्थ हों, परमेश्वर की आज्ञा पालित हों, अपनी स्वतन्त्रता हो, उसे निन्दनीय कहना तो

दूर रहा, प्रत्युत प्रशंसनीय, और धर्म कहना उचित है।
अपने हाथ से हल चलाना, वा कर-पत्र पकड़कर काम करना बुरा नहीं; परन्तु धनदेशीय लोग जो सब उपाधियों के मूल, अन्याय को आश्रय करके पदार्थ सङ्ग्रह करते हैं यही महा अनर्थ की जड़ है। ऐसे अन्याय-पथमे चलने वाले लख-पति पुरुष से, न्याय-पथमे चलने वाला निर्धन सरल पुरुष सहस्र गुन श्रेष्ठ, आदरणीय, और पूज्य है। ऐसे पवित्र-चित्त कृषिक पुरुष की बैलों से पूर्ण कुटिया के सामने, अधर्मी लखपति की अश्व और रथों से प्रोभायमान, चित्तको चमत्कार देनेवाली, अट्टालिये किसी कामकी नहीं। ऐसे बुभुक्त कृषक के केलेके पत्तोंपर पड़े हुए बिना उपकरणों के तण्डुलों के आगे, परधनापहारी धनी पुरुषके सोने के पात्रों मे पड़े हुए सुगन्धि-पूर्ण, स्निग्ध भोजन सहस्र गुण निकृष्ट हैं। इसदेशके लोगोंको बहुत दिनों से ये खोटा संस्कार

पड़ रहा है कि, वे न्यायसे विरुद्ध खोटे कामों से अर्थका सङ्ग्रह करना अच्छा जानते है, परोपजीव्य वृत्ति का आश्रय करके लघु-तर तृण से भी लघु बन जाते हैं, निशाचरों से अपने शरीर को शीर्ण, और जीर्ण कर डालते हैं, परन्तु ईश्वरका अनुमत सबके उपकारी शिल्प-काम करने मे सम्मत नहीं होते।

परिश्रम का नियम रखने से, सब प्रकार का कल्याण और सुखकी वृद्धि देखी जाती है, यदि इसका कोई नियम न रक्खा जावे, कभी आतिशय्य और कभी न्यूनता हो, तो कई प्रकार के बड़े २ अनिष्ट उत्पन्न होते हैं इसी बात की व्यवस्था लोगों मे नहीं, कोई तो प्रत्येक दिन ३० ३५ घड़ी निरन्तर काम करते रहते हैं, और कई ४४ सा ठ घड़ीयों मे निरन्तर बैठकर, चार घड़ी मात्र भी परिश्रम नहीं करते। ये दोनों बातें अनिष्ट का मूल हैं। पहिले लिख चुके हैं कि, परिश्रम जितना हो सके उसका नियम करना उचित है, अधिक परिश्रम जिन दुःखों

का मूलहै न्यून परिश्रम से भी वेही सब दुःख उपस्थित होतेहैं। शरीर दुर्बल, अन्तःकरण निस्तेज, और सब धर्मकी वृत्तियें दुर्बल होजाया करती हैं। ईश्वर का अभिप्रेत भी नहीं है कि, मनुष्य एक ही प्रकार का काम करके अपनी अपनी आयु को बितावे, जबउसने कई प्रकार की शुभ-वृत्तियें हमें दीहैं तो हमें भी यही उचितहै कि, उन सबों का सञ्चालन करके, शरीर और मन को सतेज करते रहें। प्रतिदिन जीविका के निर्वाह करनेके लिये कुछ समय व्यती करके, शेष काल को ज्ञान के अनु-शीलन, धर्मके अनुष्ठान, और निष्पाप आमोद प्रमोद के कामोंमे व्यतीत करें।

इस संसार मे जो लोग केवल इन्द्रियोंकी सेवा, और विषयों के विलासमे लगे रहते हैं, लोगोंका कुछ उपकार नहीं करते, बड़े २ स्वादु षट्रस भोजनों को भोगते, और निर्धनों से सेवा कराते हुए अपना सारा

समय नष्ट करते हैं, उन पुरुषों की व्यवस्था प्रणा-
लीके बीच मे कोई न कोई, दोष रूप छिद्र होईगा,
इसमे कुछ सन्देह नहीं। अन्य २ शिल्प-यन्त्रोंकी नांई
इस मनुष्य शरीर को भी हम शिल्प-यन्त्र कहसक्ते हैं
ऐसी विशृंखलता के होने से प्रधान २ इन्द्रियों के
निद्रित, और विकृत होजाने के कारण ज्ञानकी वृद्धि
और धर्म्म की उन्नति करना जो मनुष्य का मुख्य
उद्देश्य है आपही विनाश होगा इसमे क्या सन्देह है
यद्यपि आहार आदि सामग्रीयों के प्रस्तुत करने के
लिये प्रतिदिन कुछ २ समय काम करना उचित का
आवश्यक है; परन्तु स्वाभाविक नियम के अनुसार
अपना जीवन बिताने के लिये "अर्थात् शरीर के स्व-
स्थ रखने को परिष्कृत वस्त्र, और प्रयोजनीय भोग
भोगने के पदार्थ" विशेष परिश्रम और अधिक-
की कुछ आवश्यकता नहीं।
मनुष्य की जब भोगाभिलाषा बहुत बढ़जाती है

तव वह अनावश्यक पदार्थों को भी अपने अत्यन्त आवश्यक जान, उनकी प्राप्ति के लिये बहुत-परिश्रम, और बड़े २ कष्ट स्वीकार करता है जिससे महा अनिष्ट की उत्पत्ति होती है।

जब लोग इस प्रकार निष्प्रयोजन द्रव्यों की अभिलाषा को छोड़दें, और प्रतिदिन कमसे कम एक पहर भरभी गठके परिश्रम करलें, तो जीवन का निर्वाह बहुत अच्छी रीत से होसक्ता है इसमें कुछ संशय नहीं।

यह बात तो सब जीवों को उचित है कि, अपने २ सामर्थ्य के अनुसार कुछ २ समय परिश्रम के कामों में अवश्य व्यतीत करें क्योंकि दूसरों पर भरोसा कर बैठना अधम पुरुषों का काम है। ईश्वर ने अपना २ निर्वाह करने के लिये जितना सामर्थ्य आवश्यक है सब को दे रक्खा है, सिंह अपना आहार खोज लेता है, बीवर घर बनाने के समय एक दूसरे को सहायता देते हैं, मधु-मक्खियों की ओर देखो तो कोई

मधुलातीहैं, कई क्रम निर्म्माण करती हैं, और कई मधुका सञ्चय करती रहती हैं।

बड़े दुःखका विषयहै ! कि मनुष्य इन सब व्यापारों को देख करभी, परमेश्वर के अभिप्रेत को नहीं जान्ता, अपने स्वभाव और सामर्थ्य को जान भी अपने कर्त्तव्य वा अकर्त्तव्य कामों को निश्चय नहीं करलेता, क्या यह बात नहीं जान्ता, कि उक्त महा भोगाभिलाषी पुरुषों की, और परोपजीवी निकम्मे मनुष्यों की संख्या जितनी बढ़ेगी उतनाही अन्य पुरुषों को परिश्रम करना पड़ेगा, अपनी २ शक्ति अनुसार सब लोग काम करें, तो सबको थोड़ा काम करना पड़े। यही बात नहीं है कि, सब कोई अपने हाथ से हल चलावें वा कुदाल पकड़ बयठें। धनी लोग धनसे और पण्डित लोग अपनी बुद्धिका परिचालन करके नाहसों प्रकार से लोगों के उपकार कर सक्ते हैं। इनदोनों को इन्हीं उपायों से देश का कल्याण और उन्नति

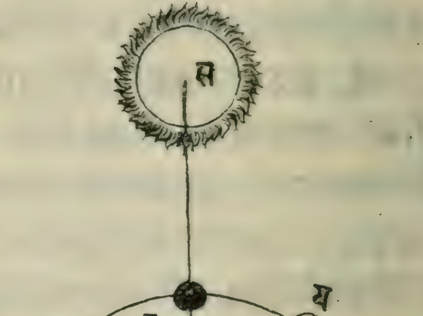
करने मे सब प्रकार यत्न आवश्यक है। कायिक और मानसिक दोनो प्रकार के परिश्रमोंकी आवश्यकता है। जिन लोगोंने अपनी बुद्धि के बल से नई २ कलें निकाल नये २ तत्वों को प्रगट किया है, वे इस संसार मे बड़े उपकारी और प्रशंसा के योग्य मनुष्य हैं। जो लोग मुखसे सत उपदेश, और उत्तम २ ग्रन्थ बना, लोगों के भ्रमों को दूर करते हैं, और अपने देश की कुरीतियों के सुधारने मे मन तन से यत्न कर रहेहैं, वे इस भू-लोग के शुभ-चिन्तक उपकारी मनुष्यों के अग्र-गण्य हैं। जिसप्रकार ऊषाकालकी अति सुन्दर अरुण प्रभा पूर्व-देश से उदय हो, उत्तरोत्तर पश्चिम दिशा तक विस्तीर्ण होती जाती है वैसे ही अनन्त धार्मिक मनुष्यों का ज्ञान और धर्म भी, क्रम २ से समग्र पृथिवी मण्डल मे फैलता जाता है।

धनीलोग जो अपनी भोगाभिलाषा मे ही रहते हैं, समाज के उपकारी कामों मे सहायता वा यत्न नहीं करते,

यह उन्की निकृष्ट प्रवृत्तियों की उन्नति का कारण है, और अपयश का मूल है, उन्को धार्म्मिकों मे हम किसी प्रकार भी नहीं गिन सक्ते। उन्की बुद्धि, और सारी धर्म्म प्रवृत्तियें, प्रबल हुई २ निकृष्ट प्रवृत्तियों के आगे मन्द, और निकम्मी हो रही हैं। इस देश के बड़े २ धनी लोग, जिन सब व्यर्थ, और पाप-युक्त कामों मे धन का व्यय करते हैं, और अपने अमोलक समय को नष्ट करते हैं, इसको स्मरण करके किस का चित्त शोकाग्नि से सन्तप्त, औ अथाह दुःख-सागर मे डूब, ऐसे २ अपने देशीय भाईयों को धिक्कार नहीं करता और उन्पर अप्रसन्न नहीं होता।

তৃতীয় পরিচ্ছেদ।

চন্দ্র



यद्यपि पृथिवी से चांद एक रुपये की थाली की नांई दिखाई देताहै, परन्तु वास्तव में यह भी पृथिवी के समान एक बड़ा भारी गोलाहै। इसका व्यास न्यूनाधिक ९५० कोश, और आयतन प्रायः पृथिवी के आयतन का ४९ वां भागहै पृथ्वी से प्रायः १०,५,९०० कोस के अन्तर पर होने के कारण इतना छोटा दिखाई देताहै। चन्द्र आपने तेजोमय नहींहै इसपर भी सूर्य्य की प्रभा गिरतीहै इसीसे तेजोमय दिखाई देताहै। चन्द्र-मण्डल के ऊपर का भाग भूमण्डल की नांई कहीं ऊंचा, और कहीं नीचाहै, समान नहीं; परन्तु इसमें जैसी भारी २ गह्वरहैं, पृथ्वी मे वैसी नाहिं, इसके ऊपर जो काले २ धब्बे से दिखाई देतेहैं, वे और कुछ नहीं, केवल बड़ी २ गुफा। और बड़े २ गह्वर स्थानहैं, जो सूर्य्य की किरणों के न पहुंचने के कारण दीप्त नहीं होते, ये सब गह्वर आदि इतर और पर्वत में ही अधिक है जो दूरसे दूर-वीक्षण द्वारा देखने पर नाना वर्णों के

दिखाई देताहै, कोई स्थान धूसर, कोई हरित, कोई २ थोड़ा रक्त वर्ण प्रतीत होताहै। ज्योति-र्वित् पण्डितों ने गणना करके उनकी लम्बाई और चौड़ाई तक का भी निरूपण करलीयाहै

चन्द्रमा के जो २ स्थान अति उज्वल दिखाई देतेहैं, वे ऊंचे २ पर्वतहैं। उत्तर और पूर्व मे गह्वर और निम्न स्थान अधिकहैं, दक्षिण और पश्चिम पर्वतों के पुञ्ज से परिपूर्ण होरहे है। ज्योतिर्वित् पण्डितों ने बहुत वार दूरबीनों से देख २ उन सब पर्वतों के आकार, प्रकार, शाखा, प्रशाखा, आदि अच्छी रीति से जान, गणना करके ऊंचाई तकभी स्थिर करली है। यहां क्याहै, इस चन्द्र-मण्डलके जिस अर्द्ध भाग को देखतेहैं उसका चित्र तक भी विन्होने प्रकट करदिया है।

ऊंचे २ पर्वत, और गंभीर गह्वरों के होनेसे, चन्द्र-मण्डलका उपरि भाग भू मण्डलसा दबाहुआ प्रतीत होरहा है एक पर्वत १६,१९८ हाथ और एक १५,८८६ हाथ, और

एक १५,२११ हाथ ऊंचा है।

पृथिवी जैसे एक बरस मे सूर्य्य की प्रदक्षिणा करती है, वैसे चन्द्रमा २१ दिन १९ घडी १२ पल और ५८५ विपल मे पृथिवी के चारों ओर एक बेर घूम जाता है। पृथ्वी की जैसी आह्निक गति है, चन्द्रमा भी वैसे ही पृथिवी की प्रदक्षिणा करते २ रथ-चक्र की नांईं अपना जब एक आवर्त्तन पूरा करता है, इसको चन्द्रमा की आह्निक-गति कह सके हैं। पृथिवी की प्रदक्षिणा करने मे जितना समय लगता है, आह्निक गति मे भी उतना हि समय लगता है।

चन्द्रमा स्वयं तेजोमय नहीं, पृथिवी की नांईं सूर्य्य के प्रकाश से प्रकाशित है, यह बात पहिले एक बेर लिख आये हैं। जिस भाग मे सूर्य्य की प्रभा नहीं गिरती वह भाग अन्धेरे मे रहता है, दिखाई नहिं देता. पृथिवी मे जैसे दिन और रातें होती रहती हैं, चांद मे भी वैसी हि होती हैं जिस भाग मे जब सूर्य्य की

किरणें पड़तीहैं तब उस भागमे दिन, और दूसरे भा
गों मे रात्रि होती है। जैसे पृथ्वी की आन्हिक गति
से उसमे दिन रात्रियें होतीहैं, वैसे हि चांदकी आन्हि-
क गतिसे चांदमे दिन रात्रियें होतीहैं, उस्का दिन मा
न और रात्रिमान प्राय एक पक्षके तुल्य है।
जैसे किसी दीप के निकट एक गोल वस्तु रखदेने
से उस दीप के आलोक से उस वस्तु का अर्द्ध प्रकाश
पाताहै आधा नहीं वैसेही सूर्य्यकी ज्योतिसे चन्द्र
मण्डल का भी अर्द्ध-भाग नियत प्रकाश पाता है।
जब हम उस सारे अर्द्ध-भाग को देखलेतेहैं उसे पू
र्ण-चन्द्र कहतेहैं और जब सम्पूर्ण नहीं देख सकें,
एक २ अंश देखते हैं, तो उन २ अंशोंको चन्द्र कला
कहतेहैं। इस प्रस्ताव के पहिले ही जो चित्र दिखाया
गयाहै उसमे स. सूर्य्य; प, पृथ्वी; और क., ख, ग, घ, च,
छ, ज, झ, चन्द्रमाका स्थानहै। जब चन्द्रमा क, के स्थान
मे ठहरता है, तब उस्का जो भाग सूर्य्यकी किरण से

प्रकाशताहै, वह सूर्य्यके संमुखहोताहै, और जिसपर सूर्य्यकी दीप्ति नहीं पहुंचती, वह पृथिवी की ओर होताहै। इसीलिये पृथिवी के लोग उस समय चांद को देख नहींसके, उसको अमावस्या कहतेहैं। फिर जब उसस्थानसे चलकर ख चिन्हितस्थानमे पहुंचताहै, तब उसके दीप्त सब भागों की चौथाई हमारे देखनेमे आतीहै, जैसे ख पर पीछे जब ग स्थान पर आताहै तब उसके प्रकाशमान अंशोंका आधा देखनेमे आताहै, जैसे च पराअन्त मे जब च चिन्हित स्थानमे पहुंचताहै तब चारोंभागों मे तीन भाग दीखने लगतेहैं, जैसे र, फिर च चिन्हितस्थान मे सम्पूर्ण दीखाई देने लगताहै उसी को पूर्ण चन्द्रमा कहते हैं। पूर्णचन्द्र अत्यन्त शोभा-कर होताहै।

चन्द्रमा के स्वयं दीप्तिमय ना होनेपर भी हम जैसे उसको सूर्य्य की दीप्ति से दीप्तिमय देखते हैं वैसेही यदि चन्द्र-मण्डल मे भी हमारी नांई बुद्धि-जीवी लोग वास कर

ते होते, और हमारी पृथिवी को सूर्य्य-रश्मियों से रश्मिमय हुई२ देख पाते तो क्या आश्चर्य था। हम जैसे चन्द्र-कलाओं की ह्रास वृद्धि देखते हैं, वे भी वहां से वैसे ही पृथिवी कलाओं की ह्रास वृद्धि देख पाते, इसमे कुछ सन्देह नहीं था।

पृथिवी पर जैसे चांद की किरणें पड़ती हैं, वैसे ही चन्द्र-मण्डल मे पृथिवी की प्रभा पड़ती है इस निमित्त चन्द्र का जो भाग सूर्य्य-रश्मियों से सुन्दर चमकता है उसके सिवा और २ भाग भी कुछ २ धुंधले से दिखाई देने लगते हैं। १७७४ ईसवी तीसरी फेब्रुवरी को यह धूसर वर्ण परिवर्तित हो, कुछ २ पीत-प्रभा-युक्त हरा दिखाई देने लग गया था जिसको देख, लम्बर नाम एक ज्योतिषी साहिब ने लिखा था कि, अमेरिका के दक्खनी महारण्यों की हरी २ तरुओं की प्रभा ने चन्द्र-मण्डल मे प्रतिबिम्बित हो, चन्द्रमा को भी इस वर्ण का कर दिया है।

चन्द्रमा की ज्योति: देखने मे, जो उस प्रतीत नहीं होती,

इसीसे पुराने पण्डितोंने चांदके हिमांशु, और पुनीतांशु आदि नाम भी रक्खेहैं; परन्तु इनदिनों मे मेलनी नामक एक युरोपीय पण्डितने बहुतों के सामने परीक्षा करके चांदकी ज्योतिः मे उष्णता को प्रमाणोंसहित सिद्ध करके दिखा दियाहै ।

जानफेड्रिक वर्लिन

इस प्रस्ताव के आरम्भ मे जिस महात्मा का नाम लिखा हुआहै, इसे दया-गुण का समुद्र कहें तो इसमे भी कुछ संशय नहीं। यह १७४० ईसवी मे फ्रांस राज्यके बीच श्रासबूर्ग नगर मे जन्म ले, बाल्य-कालसे ही सबकेसाथ अपूर्वस्नेह, और स्वाभाविक-वात्सल्य प्रकटकरके सबका स्नेह-पात्र होगयाथा और इसकी बाल्य-कालसे ही यह दशाथी कि, पिता माता से जो कुछ धन शारीरिक निर्वाह को मिलता, एक पेटी मे बंद कर समय२ मे अपने निर्धन पड़ोसियों, तथा और२ आतुर जनोंके उपकारक कामों मे व्यय कर डालताथा। एकदिन की

बात है कि, इसका पिता जो व्यौपार के विषय मे अत्यन्त सीधा मनुष्य था उसके पास एक व्यौपारी बेचीहुई किसी वस्तु का मोल लेनेको आया, और यह रुपैये अपने पास न होने के कारण लाचार चिन्ता जलमे डूब, अधो-मुख हुआ, जानफ्रेड्रिक अपने पिता की यह दुःखित दशा देख, उसीक्षण अपने घर मे जा, जितने रुपैये पेटीमे थोड़े २ करके इकट्ठे किये हुए थे, बड़ी प्रसन्नता के साथ अपने पिता के आगे लाकर समर्पण करदिये।

इसकी शैशव-काल की करुणा और वदान्यता के ऐसे २ कई उदाहरण हैं। इसने दूसरों का दुःख दूर करने के लिये अपना कष्ट और क्षति स्वीकार करने मे कभी कातरता नहीं दिखाई थी, प्रत्युत परो-पकार का स्थान उपस्थित होने पर अपने आप को अत्यन्त सुखी और अहो-भाग्य मानता था। एक दिन की बात है, कि एक स्त्री कुछ पदार्थ सिर पर धरे हुए बाज़ार मे बेचने

को जा रही थी कि, वाट मे धूर्त्त और दुष्ट वालकों ने
धक्के देकर उसे गिरा दिया और निर्दय नाकी, उस समय
दुर्लिन यह व्यापार देख, वालकों को महा धिक्कार
करने लगा, और अपनी पेटीये से कुछ रुपैये निकाल
करके उस बुढ़ियाको दे, परमेश्वरका धन्य-वाद
पढ़ने लगा
फिर एक दिन दुर्लिन एक कपड़ा वेचने वाले के पास
से चला जाता था, देखा कि, एक अति कृपण स्त्री
घूरा २ मोल अपने पास न होनेके कारण वस्त्र मोल
लेनेमे अति व्यग्र होरही है चुपका सा एक कोने
मे किसी व्याजसे खड़ा होरहा, जब देखा कि, वहस्त्री
कपड़ा क्रय करने मे असमर्थ हो, वहांसे चल निक
लीहै, देख, ठीक २ मोलके बीच जोकुछ कामी थी,
व्योपारीको देकर कहाकि उस बुढ़िया को,
जो वस्त्र वह लेना चाहती है आदर से दे दो इतना कह
आप वहां से चलागया, उस बुढ़ियाके आशीर्वाद तक

भी सुनने मे इच्छा नकी ।

सन चरित्र माता पिताके सन उपदेशों के सुनने, तथा उन्की सुजनता के देखने से, वर्लिन मे जो २स्वाभाविक दया और वात्सल्य आदि उत्तम २गुण उत्पन्न हुएथे, वे इस्की अवस्थाके वढ़ने के साथ२ ही वढ़ते रहे। इस्के हृदय-क्षेत्र के भीतर जो परम सुन्दर धर्म का बीज बोया गयाथा, वह दिन२ उन्नत हो, यौवन और प्रौढ़ा-वस्था मे वृक्ष-रूप से परिणत हो, अमृत-फल उत्पन्न करने लगा ।

इस महात्मा पुरुष ने चिकित्सा आदि नानाहितकारी शास्त्रों की नांई, धर्म-शास्त्र को भी अच्छीरीत सीख, १७६६ ईसवी मे फ्रांस देश के बीच ओपलडवाथ स्थान की ग्राम-याजकता स्वीकार की ।

यद्यपि इस महात्मा के पहिले वहांके निवासी लोग वहुतही मन्द अवस्था के बीच पड़े हुएथे परन्तु अत्यन्त दया-शील, दूसरों का दुःख दूर करके अपने

आपको सुखी मानने वाले, धार्म्मिक बर्लिन के मिल जाने से, उन्को दुःख-सागर से निकलने की भी दृढ़ आशा हुई। बर्लिन का केवल उन्को धर्म्मोप-देश करना ही काम न था, वरन सब प्रकार के व्यवहारों मे सहायता देने का भी सङ्कल्प था, ये लोग जो पहिले महादरिद्री, मूर्ख, धूर्त्त और अपने कृषि आदि कामों के करने मे भी अनभिज्ञ थे इन्के सुखी करने के लिये और सब व्यवहारों मे निपुण होने के लिये बर्लिन ने प्रतिज्ञा की हुई थी, कि जहां तक हो सके, इन्के चरित्रों को सुधार कर और नाना प्रकार के उपाय सोच २ कर उन्को बताता था, परन्तु वे ऐसे अभागी थे कि, उस्के उपकारों को कुछ भी न समझे, प्रत्युत उस्के बड़े भारी शत्रु बन गये थे, और एक बेर बाट मे इकठ्ठे हो, पकड़ कर उसे मार कर जल मे डुबा देने को भी उद्यत होगये थे।

जो ऐसे मूर्ख, और महा धूर्त्त लोग थे कि, अपने भले और बुरे को भी नहीं समझ सक्ते थे, उन्के साथ वादविवाद

करने को व्यर्थजात, बर्लिन ने यह सोचा, कि यदि इन लोगों का किसी अत्यन्त धन शाली सुनीति सम्पन्न, सभ्य-देश के बीच जाना आना हो जावे तो आशा है, कि ये लोग भी उन्की सङ्गत और उन्के सुप्रणाली से होते हुए व्यवहारों को देख, ज्ञान-सम्पन्न होजावेंगे इस्मे संशय नहीं। यह बात विचार कर उसने देखाकि, अत्यन्त-समृद्धि-शाली सुनीति-युक्त लोगों से पूर्ण अत्यन्त निकट, ष्ट्रासवूर्ग नाम नगर है, यदि ये लोग अपने देश की वस्तु वहां पर वेचने को लेजाया करें, और वहां के वस्तुजात अपने देश की श्री-वृद्धि के अर्थ लाया करें तो इससे अन्नमे वहुत उपकार दृष्ट पड़ेगे इसलिये वहां तक एक अति सीधा मार्ग निकालना और वाटमेऊास नाम नदी पर पुल वनाना अत्यन्त आवश्यक है। ऐसा निश्चय करके इसने उन सवोंको वुलाया और अपना पूरा२ आशय समझाकर कहाकि, यहकाम तब वन पड़ता है,

जो तुम लोग पर्बत को काट बहुत सा पत्थर इकट्ठा करो, तो इस नदी पर एक सुन्दर पुल बन जावे। इस बात के सुनने ही वे लोग बोल उठे कि, यह बात म हा असम्भव प्रतीत होती है, एक २ करके सभने अप नी २ असम्मति प्रकट की, यद्यपि बर्लिन ने कई युक्ति यों से उन्हें समझाया और उपदेश भी किये, परन्तु जिन्होंने जब एक न मानी तो बर्लिन अपने कंधे पर आप कुदाल उठा, एक अति विश्वासी भृत्य को साथ ले, पर्बत से पत्थर काटने को चला, पत्थरों से चोटें भी सही हाथ पाओं मे बहुत से कांटे लग २ रुधिर भी चला, परन्तु वह उस काम से विमुख न हुआ, क्यों होता वह तो पर दुःखों के दूर करने वाले कामों को ही अपना सुख समझता था। इस काम के बीच मे इस ने अपना सब धन व्यय करके अपने और २ मित्र जो दूर २ देशों मे रहते थे उन्से धन का सङ्ग्रह करना आरं भ किया। इस को बहुत दिनों तक अकेले काम करना

नहीं पड़ा था, थोड़े ही दिनों के भीतर इस्के सम्पूर्ण मित्र, ओर शिष्य इस शुभकार्य्य के वीच सहायक आन हुए थे। वर्लिन रविवार तो आप रीति-पूर्व्व क धर्म्मोपदेश करना, ओर चन्द्रवार प्रातः काल से ही, सब साथियों को साथले, उक्त काम करन मे जा प्रवृत्त होताथा, इसीरीत तीन वरस लगातार परिश्रम करते २ पथ प्रस्तुत हुआ, सेतु वन गयी,

——श्ट्रासवूर्ग नगरमे लोगों का आना जाना प्रारंभ हो गया, सभ्यपुरुषों के साथ असभ्यों की वार्त्ता लाप होने से वड़े २ उपकार देख पड़े, थोड़े ही दिनोंमे सुखकी नदी वह निकली। वर्लिन ने वालकों को जव चाहा कि, ये शिल्प-विद्या के काम मे भी निपुण हो जावें तव कितने एक वालकों को अपने पास से छात्र-वृत्ति देकर श्ट्रासवूर्ग नगर के वड़े २ निपुण सूत्रधर, कर्म्मकार, शकट-कार, काच कर्म्मकार आदि के पास काम सिखाने को भेजा। ये सब वालक

वहांसे सीख अपने देशों मे आ, अपने हाथों से ऐसे२ काम करने लगे, जो उन्के बड़ोंने कभी स्वप्नमे नहीं देखेथे, तब वे सब मिल कर उस एक महात्मा के यत्न और साहस की वार२ प्रशंसा करने लगे, देशका अत्यन्त मङ्गल हुआ, वर्लिन मे पित्र-तुल्य भक्ति और श्रद्धा प्रकाश करते हुए स्थान२मे उस्का धन्य वाद गाने लगे।

फिर वहांके लोगों को अच्छी रीति से खेती करते हुए न देख, वर्लिन ने कृषि-विद्याके विषयमे बहुतसे उपदेश दिये, और यह अभिलाषा की कि, यहां के लोग अच्छीरीत से खेती करना सीखजावें, परन्तु वे लोग पहिले कुछ नहीं सुनते थे, और कहते थे कि "यह नगरों के रहने वाले खेती करना क्या जानें" परन्तु वर्लिन का तो जीवन ही परोपकार के लिये था इसने अधिक समझाना व्यर्थ जान, कृषि कार्य्य के बीच मे भी आपस्युभ दृष्टान्त दिखाने

को सङ्कल्प कर, रहने के घर के पास जो दो एक
अच्छे बड़े उद्यान थे उनकी पृथ्वी को खुदवाकर
अपनी कृषि-विद्या के बल से उसमें उत्तम २ फलों
के पेड़, जो उन्होंने कभी नहीं देखे थे लगा दिये।
और वह जब शीघ्र ही अङ्कुरित हो वृक्ष बन गये,
इस आश्चर्य्य घटना को देख वहां के लोग अचम्भे मे
आ, इसके निगूढ़ तत्वों के जानने के लिये बड़ी श्रद्धा
के साथ आन २ कर पूछने थे, और बर्लिन उस शीघ्र
हो जाने वाली कृषि-प्रणाली को बड़े प्रेम से उन्हें
बताता था। जिसका परिणाम यह हुआ कि, जहां पर
कभी किसी ने फलों के वृक्ष नहीं देखे थे, वहां
जिधर देखो, फल-वृक्षों से परिपूर्ण उद्यानों के उ
द्यान दिखाई देने लगे। इसके सिवा बर्लिन ने उन्हें
आलू, सन आदि उत्तम २ वस्तुओं का उत्पन्न करना
भी सिखाया जिससे उस देश में आगे से बहुत अधिक
श्री-वृद्धि होने लगी। और उसके साहस और उत्साह

के बढ़ाने के अर्थ एक कृषि-समाज वहां पर स्थापन किया जो, उत्तम रीति से कृषि करने वाले कृषक लोगों को पुरस्कार और प्रशंसा-पत्र आदि देता था।

वर्लिन युवा और प्रौढ़ा वस्था के मनुष्यों को सदा यही उपदेश करता और सिखाता था कि, जिससे उनको अन्न और वस्त्र की प्राप्ति में क्लेश न हो, और परमार्थ के बीच में अत्यन्त श्रद्धा उत्पन्न हो और बालकों को तो और भी कई प्रकारों के उत्तम २ उपदेश देता रहता था जिससे देश का नितान्त मङ्गल हो। जिन दिनों में इस महात्मा ने वंदोरोव की याजकता का पद अङ्गीकार किया था उन दिनों पांच ग्रामों की सांझी एक छोटे से ग्राम में पाठ-शाला बनी हुई थी, सब बालक वहीं आकर पढ़ते थे, तब इसने सोचा कि, यहां पर एक बड़ा भारी विद्यालय बनाया जावे तो बड़ाही उपकार हो। वंदेलारोव

निवासियों को बुलाकर कहा कि, तुम भी इस वि षय मे कुछ सहायता करो, परन्तु विन्होंने अपने मूर्खता दोषसे नयी पाठ-शाला का घर बनाने को अनावश्यक समझ, सहायता देनी स्वीकार नकी। परम दयाशील वर्लिन किसीवातसे भी शुभ कामों से हटनेवाला तो थाही नहीं, उसी समय अपने मित्र जो स्ट्रासबूर्ग नगर मे रहतेथे उन्हें लिखा, और अपने पास जो कुछ धन था सब का सब उस शुभ-काम के अर्थ सङ्कल्पकर दिया, और गृह-निर्म्माण का आरम्भ कर, थोड़ेही महीनों मे अपने बड़े भारी मनोरथ को पूर्ण करडाला। थोड़े हीदिनों के भीतर ओयल्डवाश्च नामक स्थानमे एक पाठ-शाला का मन्दिर वनगया, और आस पास और २ गाओं मे भी पाठ-गृह वनने आरम्भ होगये। इन सब बातों के होजाने पर भी, उक्त विद्या-लयों मे उपयुक्त अध्यापकों के नहोने के कारण, शिक्षा-कार्य्य को सुन्दर

रीति से चलना कठिन जान, वर्लिन ने कितने एक बुद्धिमान पुरुषों को अध्यापकता का काम स्वयं सिखाने को उद्योग किया।

बालकों के सिखाने की जो प्राचीन शिक्षा-रीति थी, उसके अनुसार सिखाते हुए अपने मन के क्षोभ को निवृत्त होता हुआ न देख, उसने यह चाहा कि, दो वर्ष की अवस्था से लेकर यदि बालकों को शिक्षा का आरम्भ होजावे, तो आशा है कि, उन्की उत्तर कालीन-शिक्षा सहज ही सुसाध्य होसक्ती है यह विचारकर, उसने कईएक शिशु-शाला बनाईं, जिनमे दो बरस से ऊपर, और छः बरस से नीचे की अवस्था के बालक ही प्रविष्ट करके सिखाये जातेथे।

उन शिक्षा-लयों मे उन छोटे २ बालकों को समय२ मे खाने पिलाने, न्हाने, सुलाने, कपड़ा आदि पहिराने और सिखाने के लिये जो निर्वाहिका स्त्रियें नियत की हुईथीं वर्लिन अपनी गांठ से उन्को वेतन देताथा।

इस समय के पहिले ऐसे छोटे २ वालकों के सिखाने की पाठ-शाला कहीं भी नहीं थी इसी महात्माने पहिले पहिल वंदेला रोख निवासियों के वालकों के लिये यह शिक्षा प्रणाली आरम्भ की।

इन पाठ-शालाओं के वालक, केवल वर्ण माला अथवा नाम धाम ही लिखकर अपना काल-क्षेप नहीं किया करतेथे, किसी समय सूई का काम और किसी समय वुनना आदि अच्छे २ शिल्प-विद्या के काम करते हुए जब चित्त उपराम होता था तो सुन्दर २ पशु पक्षियों की मूर्त्तियें, तथा देश, ग्राम, पर्वत, और नदियों के चित्र लिख २ अपने मनों को वहलाते थे। और कभी २ धर्म्म-सम्वन्धीय और नीति सम्वन्धीय सुन्दर २ गीत गान करके मनमें अत्यन्त प्रसन्न होतेथे, अधिक क्या कहें वे शिक्षा-स्थान को सुखका स्थान, और शिक्षा-कार्य्य को सुखका कार्य्य समझ दिन रात्रि वहां ही पड़े रहा करतेथे।

कुछ दिन पहिले जो बालक अन्न और वस्त्रों के अभावसे पीड़ित, और ज्ञान के अभाव से मूर्खता जाल मे फसे हुए थे, वे ही एक उपदेष्टा मय बर्लिन के साहस, और यत्नसे थोड़े ही काल मे अङ्क, भूगोल, इतिहास, पदार्थ-विद्या, शास्त्र-विद्या, संगीत-विद्या, नृत्य विद्या, ड्राइंग विद्या आदि विविध-विद्याओं मे सम्पन्न हो, लिखना पढ़ना, सीख, सबके शिरोमणि होगये।

उनको बर्लिन आप धर्म-शिक्षा देताथा, और सब शिक्षों के एक स्थान मे समागम के लिये उसने एक साप्ताहिक समाज नियत कियाथा। ष्ट्रासबूर्ग और अन्यान्य निकटके नगरोंके निवासी लोग, असामान्य करुणा शील वदान्यवर बर्लिन के इनसब वृत्तान्तों को जान, अत्यन्त विस्मय युक्त हो, चारों ओर से बहुत सा धन भेज२ सहायता देने लगेथे, और वह अति प्रसन्न-चित्त के साथ उन सब धनों को ले, अपनी

इच्छानुसार सब के हित कारी कामों मे व्यय करने लगा विद्यार्थियों के हित के लिये उसने एक बड़ा भारी पुस्तकालय स्थापन किया, शिक्षा के उपयोगी उत्तम २ पुस्तकें छपवाईं, गणित और पदार्थ-विद्यासम्बन्धी कई एक यन्त्र इकट्ठे किये, और उस पुस्तक अध्यापक तथा छात्रों को पारि तोषिक देकर उनका उत्साह बढ़ाया।

बांदे लाशेख निवासियों के परम बन्धु दयासिन्धु वर्लिन ने उनकी धर्म्म-शिक्षा, और विद्या शिक्षा मे एक सा परिश्रम किया। परम कारुणिक परमेश्वर के प्रति प्रीति और मनुष्यों को सुखी और स्वच्छन्द करना इन दोनों कर्म्मों की आवश्यकता का उपदेश किया। जो २ बातें उनके कृषि-कर्म्म और पशु-पालन आदि कामों के लिये बड़ी उपकारक होती थीं, सदा वुही सिखलाया करता था। यह बात तो उसने बहुत ही अच्छी रीत से बंदे ला शेख वासियों के हृदय

क्षेत्र मे उत्पन्न कर दी हुई थी कि, देशका उपकार करना मनुष्य का अवश्य कर्त्तव्य कर्म्म है। और यह भी सिखलाता रहता था कि, मार्ग के दोनों ओर सुन्दर २ पेड़ लगाने से, तथा पथ और पान्थ-शाला आदि के सुशोभित रखने से परमेश्वर प्रसन्न होता है, इस कारण यह भी तुम लोगों का अवश्य कर्तव्य कर्म्म है। वे उसके उपदेशानुसार जंगलों मे जा, बड़े २ सुन्दर वृक्षों को अन्वेषण कर अपने २ उद्यान, और मार्गों के दोनों ओर लगाते थे, और उनके पुष्पों के चित्र लिख २ कर एक दूसरे को दिखाते थे।

ऐसा करते २ थोड़े ही काल मे बुंदेलाखंड निवासी पुरुष, एक पुरुष के यत्न से सम्वृद्धि-सम्पन्न, विनीत, और धार्म्मिक होगये, मूर्खता विनष्ट होगयी, ज्ञान और धर्म्म बढ़ने लगा, अनेक प्रकार से अपनी २ जीविका करने लगे और बीस वर्षों के बीच वहां के निवासियों की संख्या छय गुणा अधिक होगई। एक की

दूसरे से प्रीति, और अनुकूलता, नित्य२ बढ़ने लगी, प्रधान२ पुरुषों का यथोचित आदर होनेलगा, सब लोग एक२ प्रकार की जीविका अवलम्बन करके सन्तुष्ट हृदयसे आयु व्यतीत करने लगे। यह अनन्त गुणोंकी खान, महानुभाव पुरुष, जीवन को सार्थक करने वाले, परोपकार व्रतको पालन करता हुआ १८२२ ईसवी मे ८७ वर्ष की आयु भोग कर प्राण त्याग कर गया। इस महात्मा का जीवन-वृत्तान्त पढ़ने से चित्त विकसित और शरीर लोमाञ्चित होताहै।

इसने पराया दुःख दूर करने के लिये जैसा यत्न, परिश्रम, उत्साह और अध्यवसाय पकड़ा हुआथा, और दृढ़ चित्त होकर बड़े२ सब विघ्नों को नष्ट करके बंदेलाखण्ड वासियों के उपकार सम्पादन किये थे, वे सब और२ धार्मिकों के लिये उपदेश रूप हो रहे हैं। जिन लोगों की अपने देशसे प्रीतिहै और उसका उपकार करना चाहते हैं, वे इस महात्मा के चरित्रों

को आदर्श स्वरूप जान, काम करें तो बड़ा ही श्रेयः
कल्यहो।

प्राय सब पुरुषों ने अग्निया सम्बन्धीय कई एक बातें सुनीहैं और बहुतों ने देखी भी हैं इस्मे कुछ सन्देह नहीं। रात्रिके समय सजल-भूमिमे और श्मशानों मे जो एक प्रकारका प्रकाश दृष्टआताहै, उसको लोग आलेया कहते हैं। यह आलोक अत्यन्त चञ्चल होताहै और पृथिवी से १ वा १॥० हाथ ऊंचे इधर उधर फिरा करताहै कभी ऊपर चढ़जाता और कभी नीचे की ओर आजाताहै। कभी २ सहसा अन्तर्हित होजाता, और कभी और २ स्थानों मे आविर्भूत होताहै। कभी २ मशालकी नांई जलने लगता और कभी सङ्कुचित होकर दीप-शिखा की नांई सूक्ष्म होजाताहै। कभी दो खण्डों मे विभक्त हो जाताहै, और कभी मिलकर फिर इकट्ठा होजाताहै।

यह जलमे डूबता नहीं, वृष्टि और वरफ आदि से छिपता नहीं।
यहां के अशिक्षित सामान्य कई एक पुरुषों को यह कुसंस्कार है कि, आलेया एक प्रकार की भूत-योनि अन्तरिक्षमे तथा और२ निर्जन स्थानों मे रहती हुई, रात्रिकाल के पथिक लोगों को पथ से भुलादिया करती है। वास्तव मे यह बात सम्पूर्ण झूठ और बनावट है, अग्नि विना भी जो प्रकाश उत्पन्न होता है, वह खद्योत वादीप-मक्षिका आदि का वृत्तान्त पढ़ने से सहज ही जानी जासक्ती है। यह प्रकाश भी वैसाही प्रकाश है फस्फोरस और हैड्रोजन नामक दोनों पदार्थों से बनाहुआ है, इसके सिवा और कुछ नहीं। जन्तुओं के शरीर, और वृक्षों के पत्ते आदिके गल सड़जाने से इसप्रकार का एक वाष्प उत्पन्न होता है जिसमे यह एक आश्चर्य गुण है कि, वायुका स्पर्श होते ही अपने आप जलने लगता है।

प्रभु और भृत्यका व्यवहार।

अब तक सम्पूर्ण मनुष्यों के बीच मे जो सेव्य सेवक भाव चला आता है, और कोई प्रधान और कोई निकृष्ट समझा जाता है धन, विद्या, यश आदि ही इस श्रेणि भेद की जड़ हैं। इस श्रेणि-भेद के होनेसे ही कोई सेवक वा भृत्य कहलाता है और कोई सेव्य वा प्रभु कहलाता है। परन्तु इन दोनो मे स्वतन्त्र कोई भी नहीं, दोनों ही पर तन्त्र, और एक दूसरे के साथे ता हैं। प्रभु अपना धन देकर भृत्य पर उपकार करता है और भृत्य अपना शारीरिक परिश्रम देकर प्रभु का उपकार करता है। अतएव भृत्य को हेय, और निन्द्य जानना प्रभु को उचित नहीं, उन्को परस्पर कैसे वर्तना चाहिये, इस विषय मे दो चार आख्यायिका इस स्थान मे लिखी जाती हैं पहिले प्रभु के और पीछे भृत्य के कर्म संक्षेप मे लिखते हैं।

प्रभु को चाहिये कि, भृत्यों पर सदा दया-युक्त रहै,

प्रहार कभी न करे, निरर्थक प्रभुता न दिखावे, और कर्कश वाक्य कभी न बोले। उन्के साथ अनीत-युक्त व्यवहार करने से, प्रीति तो एक ओर रही, प्रत्युत दोष और विद्वेष बढ़ता है। मान, अपमान, सुख और दुःख सब को एकसा ही प्रतीत होता है, यह परम-हितकर वाक्य प्रभु को हृदय मे सदा जागरूक रखना चाहिये।

भृत्यों को मन्द और नीच जान, उन पर अत्याचार करना किसी प्रकार से भी अच्छा नहीं है। उन्के ऊपर सदा स्नेह, प्रीति, और सुजनता प्रकाश करते रहना, अपनी आज्ञाओं को प्रसन्न-भाव, और अकर्कश वाक्यों से प्रयोग करते रहना ही प्रभु के पक्ष मे अति सुख दायक है। यदि भृत्य वर्ग प्रभु के काम मे असमान्न चातुर्य, और अनुराग दिखावें तो उचित है कि, उन्का यथेष्ट आदर और प्रशंसा की जावे। दासों का शरीर अस्वस्थ और अस्वच्छन्द होने से, उन्के प्रतीकार के लिये अच्छी रीत से चेष्टा करनी प्रभु का कर्तव्य कर्म है उन्के

किसी श्रेष्ठ पतित होने पर उद्धार करना विधेयहै, इन्के क्लेश-निवारण तथा अवस्था की उन्नति के निमित्त उन्हें सुमन्त्रणा देनी अत्यन्त आवश्यक है। इस देश के बहुत लोग जो भृत्यों को जघन्य जान, बुरा भला कहते रहते हैं, और अच्छीरीतसे वर्त्ता नहीं करते, यह उन्का बड़ा भारी दोषहै। अधीन पुरुषों को ऐसे २ अकथ्य और अश्राव्य वचन कहने, जिन्के सुनने से आप लज्जित होना पड़े, भद्र लोगों की दृष्टि मे कभी उचित नहींहै क्योंकि वे जान्ते है कि, ऐसे २ शब्द उच्चारण करने से हमारे भद्रता-गुण मे कलंक उत्पन्न होताहै। और वे इस बात को भी अच्छी रीत से जानते हैं कि, औरों के साथ क्रोध आदि कर अपनी निकृष्ट प्रवृत्तियों का उत्तेजन करके, अपने स्वभाव को कलङ्कित करनाहै इस्मे कुछ संशय नहीं।

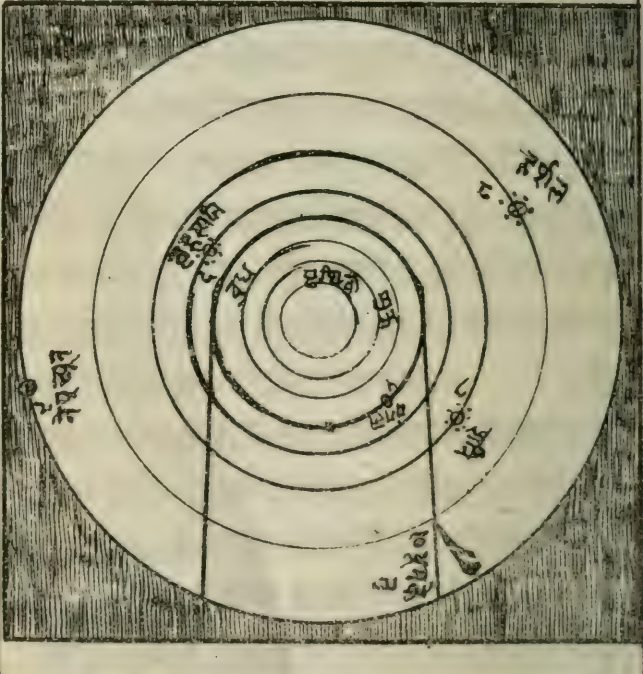
यदि भृत्य अपने प्रभु की आज्ञासे कुछ विरुद्ध आचरण करे, तो इससे भी जगत मे बड़े २ अनिष्ट उत्पन्न

होतेहैं। भृत्य के अस्वच्छा-चार करने से, प्रभुकी जितनी हानि होतीहै, प्रभुके अत्याचार से भृत्यकी वैसी नहीं होती। चोरी और विश्वास घात ये जैसे भृत्यके लिये सब कर्म्मों से गर्हित कर्म्महैं ऐसा और कोई नहीं, इतना लिखनाही बहुतहै। भृत्योंको चाहिये कि, स्वामी जो आज्ञा करे, और जिन कामोंमे नियुक्त करे, उन सबों को विशेष यत्नके साथ, अच्छी रीतसे निर्वाह करदें, स्वामीका यथेष्ट आदर, और प्रसन्नता के लिये सदा सचेष्ट रहना भृत्यों का आवश्यक कर्म्महै। यद्यपि प्रभुके सम्मुख अत्यन्त बक२ करना भृत्यका बड़ा दोषहै; परन्तु न्यायानुगत आचरण से प्रभुको प्रसन्न करने के लिये, सयत्न होना, कभी दूष्य नहीं प्रत्युत सब प्रकार से उचितहै।

स्वामी के कार्य्य को अपना कार्य्य जानना, प्रभुकी सम्पदा से अपने को सम्पदावान् और विपदा से अपने आपको विपदावान् समझना, स्वामीपर

कोई विपत्ति पड़नेसे यथा साध्य अनुकूलता करनी, प्रभुका अपने द्वारा कुछ काम बन पड़े तो उससे अपने आपको चरितार्थ प्रतीत करना, प्रफुल्ल और प्रसन्न-चित्त होकर प्रभु-सेवा मे लगे रहना, पुण्य-शील सेवकोंका प्रधान धर्म्म है। प्रभुके कार्य्यकी अवहेलना करके, अपना काम निकालना, प्रभु द्वारा निर्द्दिष्ट नियमों के अनुसार समय२ मे काम न करके उस समय को गप शप मे क्षेपन करना, किसी प्रकार भी सेवकोंका कर्त्तव्य नहीं। प्राय सब लोग जान्ते हैं कि, सेवक को स्वामी किसी काम मे भेजता है और वह उस समय को और कामोंमे नष्ट करके आजाता है, सेवक को यह काम करनी कभी उचित नहीं यह व्यवहार न्यायसे विरुद्ध, और अत्यन्त दूष्य कहा गया है ऐसे ही आचरणको स्वार्थ-परता-दोष कहते हैं। प्रभु के काम मे प्रेम और अनुराग होने से, ऐसे२ व्यवहारों मे प्रवृत्ति ही नहीं होती

सौरजगत्



चतुर्थ-परिच्छेद

सौर-जगत् ॥

पृथिवी एकही स्थानमें स्थिर हुई २ प्रतीत होतीहै, और सूर्य उसके चारों ओर घूमता हुआ दिखाई देताहै, परन्तु यह बात सत्य नहीं बड़े२ ज्योतिषियों ने निःसंशय करदिया है कि, सूर्य्य-मण्डल, बुध, शुक्र, पृथिवी आदि ग्रहों के ठीक मध्यमें हैं और ये सब ग्रह इसके चारों ओर घूमा करतेहैं। सूर्य्य आप ग्रह नहीं, जो इसके चारों ओर परिभ्रमण करते रहतेहैं उनका नाम ग्रहहै। हमारी अधिष्ठान भूत यह पृथिवी भी सूर्य्यकी प्रदक्षिणा करती रहती है, इस कारणसे यह भी एक ग्रह है।

आज तक यह निश्चय नहीं है कि, ग्रह कितने हैं। अबतक ८५ ग्रह प्रकट हुएहैं, और २ ग्रहों की अपेक्षा

बुधग्रह सूर्य्य के बहुत निकट है, उसके परे शुक्र, फिर पृथिवी, मङ्गल, बृहस्पति, शनि, हर्षल, और नेपृच्यून आदि क्रम २ से सूर्य्य-मण्डल के निकट उत्तरोत्तर दूरीपर उसके चारों ओर भ्रमण करतेहैं।
सौरजगत्‌का जो छोटासा चित्र-मय प्रतिरूप प्रकाशित हुआहै, इसके देखनेसे ही यह बात स्पष्ट प्रतीत हो जायेगी। इस प्रतिरूप के प्रकट होने के कई दिन पीछे १८५९ ईसवी के मार्च महीनेमे बल्कन नाम और एक ग्रह प्रकट हुआहै। यह ग्रह पृथिवी और सूर्य्य के बीच किसी स्थान मे है, और सूर्य्य की प्रदक्षिणा कररहाहै। उल्लिखित नौ ग्रहों के सिवा, फ्लोरा, विक्टोरिया, वेष्टा, आईरस, मीटिस, हीबी, पार्थेनोपि, आष्ट्रिया, ईजीरिया, यूनोमियां, यूनों, सीरिस, पालस, हाजिया आदि ७६ छोटे २ ग्रह, मङ्गल और बृहस्पति की कक्षाके बीच सूर्य्य को प्रदक्षिण करतेहैं। ये सब उक्त नौ ग्रहों से बहुत

छोटेहैं। इसी कारण इन्का नामही कनिष्ट-ग्रहहै।
सूर्य्य, ग्रह, तथा उपग्रह सबही यहां से छोटे २
दिखाई देतेहैं, परन्तु वास्तव मे ये बड़े २ पदार्थहैं।
पृथिवी कितनी बड़ीहै, यह बात इसी पुस्तक के प
हिले भागमे लिखआये हैं। हरशल पृथिवी से ८२
गुणा, नेप्च्यून १०८ गुणा, शनि ७३५ गुणा, और
बृहस्पति १४१४ गुणा, बड़ाहै। परन्तु सौर जगत्
मे जितने ग्रह उपग्रह आदि बड़े २ पदार्थ हैं सूर्य्य
सबों से बड़ाहै। इतना बड़ाहै कि, जिस पृथिवी
पर हम रहतेहैं इतने २ बड़े चौदहलक्ष पदार्थ इस्के
भीतर रह सक्तेहैं। इस्का आयतन सब इकट्ठे किये
हुए ग्रहों से प्रायः ६०० गुणाहै। यदि सूर्य्य-मंडल
को खोद उस्के भीतर एक गढ़ा करें और पृथिवी-
मंडल को उस्के भीतर रक्खें तो पृथिवी के चारों
ओर इतना स्थान खाली रहेगा कि, भूमण्डल के
केन्द्रसे, चन्द्र-मण्डल अब जितने अन्तर मे रहताहै,

उससे और ८१००० क्रोश दूरभी रहै तोभी, सहज
पृथिवी कीप्रदक्षिणा कर सक्ता है
कौन ग्रह सूर्य्य से कितना दूरहै, यहबात ज्योतिषियो
ने बहुत अच्छी रीतसे निश्चय कर रक्खी हुईहै।
बुध प्रायः १६२,००००० एक क्रोड़ वासठ लाख कोश;
शुक्र प्राय २,९९,००,००० दोक्रोड़ निनानवें लाख
क्रोश; पृथिवी प्राय ४,१८००,००० चारक्रोड़ अठ्ठारह
लाख क्रोश; मङ्गल प्राय ६,३३,००,००० छयक्रोड़
तेतीस लाख क्रोश; बृहस्पति प्रायः २१,५६००,०००
इकीस क्रोड, छप्पन लाख क्रोश; शनैश्चर प्राय ३९,
६० उनतालीस क्रोड़ साठ लाख; क्रोश; हर्षल प्रायः
८०२१००,००० अस्सी क्रोड़ इक्कीस लाख; और नेप्-
च्यून प्राय: १,२५,००,००,००० एकहून्द, पचीसक्रोड़
दूरीपर रहकर सूर्य्य के चारों ओर घूमाकरते हैं।
इन सब ग्रहों की दूरी को विचार करके देखनेसे
विस्मयापन्न होजाना होताहै। हम सूर्य्यसे इतनी

दूरी यह है कि, यदि तोप का गोला प्रति घण्टा २०० कोस चले, ३० बरसों में भी सूर्य्य को नहीं छू सकता। डाक गाड़ी चाहो कितनी ही शीघ्र चलाई जावे, २२००० बरस, दिन रात चलती रहे, तो भी वहां तक नहीं पहुंच सक्ती।

ग्रह और उपग्रह ॥

पहिले ही लिख आये हैं कि, जैसे ग्रह सूर्य्य की प्रदक्षिणा करते हैं, वैसे ही उपग्रह भी सूर्य्य के चारों ओर घूमा करते हैं। सब ग्रह और उपग्रह पश्चिम से पूर्व की ओर जाते हैं, केवल हर्षल ग्रह के उपग्रह पूर्व से पश्चिम की ओर जाते हैं।

ये ग्रह और उपग्रह जिस प्रकार प्रचंड वेग से घूमते हैं, इसके सोचने से बड़ा आश्चर्य होता है। हम को प्रतीत होता है पृथिवी एक ही स्थान में खड़ी हुई है, परन्तु यह प्रति घण्टा में १९,४० कोस निरन्तर धावमान

होरहाहै। ऐसेही शुक्र प्रति घण्टा ३५,३०, बुध ४८,५४, बृहस्पति १२७६ और शनीचर ९८८ कोश; गमन करताहै। तोपका गोला हर घण्टे ३५२ कोश के लगभग ऊपरकी ओर गति करताहै बुध ग्रह उससे ५३८ गुण प्रबल वेग से निरन्तर परिभ्रमण करताहै। बृहस्पति हमारी अधिष्ठान-भूमि पृथिवी से, १४१४ गुणा बड़ा है और जिन चारों ग्रहों से वेष्टितहै, वे भी सब पृथिवी से बड़े हैं। यह एक बड़ा भारी जड़-पिण्ड जैसे भू-मण्डल के से, बड़े२ और चार जड़-पिण्डों को साथ लिये हुए एक घण्टे मे १२,७९० कोस आकाश मे नित्य२ गति करताहै इसके स्मरण करनेसे विस्मयार्णव मे डूबजाना होताहै।
इसप्रकार एक२ ग्रह जो सूर्य्यकी प्रदक्षिणा करके फिर अपने स्थान पर आजाताहै, वह उसकी वार्षिक-गति कहलाती हैं। सिवा इसके उनकी एक आह्निक-गति भीहै। ये ग्रह चलते२ जितने काल मे गाड़ी के पहि

ये की नाईं अपने आप मे एक आवर्त्त पूरा करते हैं उस समय को इनका दिन और रात्रि कहते हैं। इनका जो भाग सूर्य्य के सामने होताहै, उसमे दिन; और अन्यान्य भागों मे रात्रि होतीहै। सब ग्रहों के आह्निक आवर्त्तन का काल और वार्षिक भ्रमण का काल समान नहीं होता, इसे बहुत हीभेद है। हमारे ८७ दिन ५८ घड़ी, ४ पल ३०॥ विपल से बुध का एक वत्सर होता है; परन्तु नेपच्यून ग्रह का वत्सर १६४ वर्ष, २२५ दिन, ४२ बयालीस घड़ी, औ ३० तीस पल मे होताहै। इन सब ग्रह और उपग्रहों मे नाना प्रकार के बुद्धिजीवी लोगों का निवास होना सम्भव है और यह बात भी युक्ति से सिद्ध होतीहै कि, जिन्होंने अपनी २ दिन और रात्रि के अनुसार अपने सब कामों की व्यवस्था लगाई हुई होगी, वत्सर और ऋतुओं के परिवर्त्तन से उनके चित्त की अवस्था और भाव-भङ्गी भी परिवर्त्तित होती रहती होगी।

ग्रह और उपग्रह स्वयं तेजोमय नहीं हैं, तेजोमय सूर्य्य के तेज से ही सब तेजस्वी दिखाई देरहे हैं, और सूर्य्य से समान दूरी पर नहोने के कारण ही कोई अति उज्वल प्रकाशवान, और कोई अल्प प्रकाशवान दिखाई दे रहा है। बुध-ग्रह सूर्य्य के अति निकट है इस कारण पृथिवी से प्राय सात गुणा अधिक किरणें उस पर पड़ती हैं और उष्णता भी वहां इतनी होती है कि, जल तकभी वहां सहज उबलने लगजाता है, शुक्र भी और यहां की अपेक्षा सूर्य्य के निकट है, इसकारण उसे भी इतनी उष्णता पड़ती है कि, पृथिवी के जीव जन्तु और उद्भिद वहां रखने से कभी नहीं जीते रह सके। मङ्गल में सूर्य्य का प्रकाश इतना थोड़ा पहुंचता है कि, वहां के जल आदि पदार्थ सदा जमे ही रहते हैं। इस से भी दूरी पर जो बृहस्पति, नेपच्यून आदि ग्रह हैं, उनमें शीत कितना पड़ता होगा, यह अनुभव में भी नहीं आसक्ता। नेपच्यून

मे धूपतो पड़ती है; परन्तु गणना करके देखा गया
है कि, वह धूप पृथिवी की धूपका हज़ारवाँ भाग
होगी। सुरा, तैल, घी आदि पृथिवी की वस्तु यदि
वहां लेजा कर रक्खी जावें, तो वे सब पत्थर की नाईं
कठिन हो जायंगी इसमे कुछ सन्देह नहीं। इन सब
दूर-वर्त्ती ग्रहों मे प्रकाश पहुंचने का कोई उपाय है
कि नहीं, इस विषय मे आज तक किसी विद्वान् ने
ठीक २ नहीं लिखा। दूरवीक्षण के द्वारा मङ्गल-ग्रह
मे यह तो अवश्य देखागया है कि, उसमे श्वेत वर्ण
के दो क्षेत्र हैं जो शीत ऋतुओं मे बढ़ते और ग्रीष्म
ऋतुओं मे अल्प होजाते हैं जिनको देख, ज्योति
र्विद् पण्डितों ने सिद्धान्त किया हुआ है कि, शीत
काल मे बहुत सी बरफ होने के कारण श्वेत, और
ग्रीष्म मे बरफ फुलजाने से, न्यून श्वेतवर्ण दिखाई
देते हैं इस कथन से यह बात स्पष्ट प्रतीत होजाती
है कि, पृथिवी की नाईं उन सब ग्रहों मे भी ऋतुओं

का नित्य दर्शन होता रहता है। यद्यपि यह और उपग्रहों का आकार प्रकार आदि स्पष्ट २ नहीं दिखाई देता, तथापि बुद्धिमान् शास्त्रोत्साही ज्योतिर्वित पण्डितोंने दूरबीनों के द्वारा देख २ निश्चय किया है कि, इन सब ग्रहों का आकार भी प्राय पृथिवी के आकार की नांई गोल, और उत्तर दक्षिण मे कुछ चपटा है। शुक्र, मंगल, बृहस्पति, शनीचर आदि ग्रहों के ऊपर चांद की नांई कलंक दिखाई देतेहैं और मंगल ग्रह मे कलंक तो हैं; परन्तु उनमें कोई कृष्ण, कोई पीत, और कोई लोहित वर्णका दिखाई देताहै। शुक्र की २ नै चन्द्रमा की नांई ह्रास वृद्धि होती है, और पृथिवी की नांई उसमे ऊंचे २ पर्वत भीहैं। बृहस्पति के मध्यमे धुंदलेसे दोलवे २ लेखहैं और उन्हीं के उत्तर दक्षिण मे कई एक और छोटी २ धुंदली रेखाहैं। शनैश्चर का आकार देखने मे महा सुन्दर है इसके चारों ओर तीन घेरे हैं जिनको अंगूठीयक कहते हैं।

धूम-केतु।

सौर जगत् मे ग्रह और उप-ग्रहों के सिवा और कई एक तारे हैं, जिन्का नाम धूम्रकेतु है। ये कभी२ आकाश मे गृह-मार्जनी के समान लंबे२ प्रगट होते हैं। इन्मे किसी की एक पुच्छ और किसी के दोनों ओर दो होती हैं। यह भी और सब ग्रहों की नांई नभो-मंडल मे सूर्य्य की परिक्रमा किया करते हैं, और सूर्य्य के प्रकाश से ही प्रकाशित होते हैं। पहिले हम लिख चुके हैं कि, ग्रह पश्चिम से पूर्वकी ओर चलते हैं; परन्तु सब धूम्रकेतु ऐसे नहीं चलते, कई एक पश्चिम से पूर्वकी ओर भी जाते हैं ग्रह, उपग्रह, धूम-केतु आदि तारे जिस पथ मे से होकर गति करते हैं उस पथ को इन्की कक्षा कहते हैं कई ओं की कक्षा, और ग्रहों की कक्षा से बड़ी होती है और कई एक धूम्रकेतु कभी २ सूर्य्य के इतने समीप

आजाते हैं कि, पृथिवी की कक्षा भी इतनी समीप नहीं होती। और वही धूम्रकेतु कभी २ नेपचून से भी दूर निकल जाते हैं। १६८० ईसवी में जो एक धूम्रकेतु उदय हुआ था, वह सूर्य के ९,८२,००,००० कः सौ बर्षों कोश, दूरीपर इसकी प्रदक्षिणा कर गया। १८६० ईसवी में एक धूम्रकेतु निकला था, वह सूर्य से इतना दूर था कि, प्रति घण्टा १८२१००० कोश चलने पर भी सूर्य की प्रदक्षिणा करने में उसे ५५५ वर्ष लग गये थे। ज्योतिषी लोग कहते हैं कि, नभो-मण्डल में ऐसे २ भी धूम्रकेतु हैं जिनको सूर्य की प्रदक्षिणा करने में सहस्र वर्ष से भी अधिक काल लग गया है और कई ऐसे भी हैं, जो एक ही बार हमारी दृष्टि में आये हैं, और फिर लौट कर कभी आवेंगे ही नहीं, अन बात यानवान ही होते रहेंगे !!!

धूम्र केतु अत्यन्त लघु पदार्थ होते हैं, और इनमें कोई कठिन नहीं होते उनका इनकी ऐसी स्वच्छ-

वाष्प से भरी रहती है कि, दूरबीन से देखें, तो और सब ग्रह भी उन्हों से दिखाई देने लगते हैं।

किसी २ धूम केतु के विषय मे ऐसा भी लिखा है कि, वह जब पृथिवी के बहुत नेड़े आया तो उसकी वाष्प मय पुच्छका अंश पृथिवी की वायु-राशि के साथ आन मिला है १७८३ और १८३१ ईसवी मे युरोप देश मे दो बेर एक बड़ी कुज्झटिका दिखलाई दी थी, जिसको देख, वहां के ज्योतिषियोंने यही अनुमान किया था कि, वह किसी धूम्र-केतु की पुच्छ से निकली हुई वाष्प-राशि थी।

बहुत बरस व्यतीत होचुके हैं कि, एक धूम्रकेतु निकला था, जो पहिले पहिल १८२६ ईसवी मे वायेला साहिबके द्वारा देखने के कारण उसी के नामसे प्रसिद्ध था। एक आश्चर्य्य चमत्कारी यह धूम्रकेतु १८४५ ईसवी मे जब निकला था, तो इसका उज्वलता कुछ स्फीत था, पीछे २९ दिसम्बर

को वही यह अमेरिका के एक ज्योतिषी पण्डित ने देखा कि, दो भागों मे विभक्त हो, दो धूम्र-केतु बन गये थे, एक बड़ा, और दूसरा उससे कुछ छोटा, एक दूसरे के पीछे इकट्ठे ही पास२ गति करते थे। कौन कह सक्ता है? कि असीम नभोमण्डल मे कहां, किस समय, क्या कुछ आश्चर्य व्यापार हो रहा है कौन जान सक्ता है? कि, उसकी कहां तक सृष्टि है, और कितनी महिमा है।

सत्कथन और सदाचरण।

१। अङ्गिलस्त देश के एक अति प्रसिद्ध पण्डित से किसी पुरुष ने पूछा कि, महाराज! झूठ बोलने से मनुष्य की क्या हानि होती है? इसने उत्तर दिया कि, सत्य कहने पर भी कोई जन इसपर विश्वास नहीं करता

२। स्पार्टा राज्यके राजा एजिसिलस से किसी पुरुष ने पूछा कि, महाराज! बाल्यकाल मे बालकों को

क्या २ बातें सिखलानी उचित हैं ? न-पति ने उत्तर दिया कि, यौवन और प्रौढ़ा-वस्था में जो उनके काम आवें ।

३। एक समय रोम देश के अति सुशील, दयालु राजा एण्टोनाइनस पायस के पास आकर सभा के कितने एक सभ्यों और मन्त्रियों ने प्रार्थना की कि, यह समय अन्यान्य राजाओं को जीत, राज्य श्री बढ़ाने का है, इसने सुन कर उत्तर दिया कि, हज़ारों शत्रुओं को मार कर राज्य-श्री बढ़ाने की अपेक्षा, प्रजा के एक मनुष्य की प्राण-रक्षा करनी मुझको अत्यन्त वाञ्छित है ।

४ रोम के राजा टाईटस ने एक दिन राज सम्बन्धी या कोई काम नहीं किया था, रात को सोते समय जब यह स्मरण हुआ, पछता २ अपने मन्त्रियों से बोला कि, मित्रो ! आज का दिन मेरी आयु में से व्यर्थ ही चला गया है इसका मुझ को महा-पाप हुआ है ।

५। इङ्गलिस्तान का आलफ्रेड नामक राजा जो ज्ञान, दया, और परमेश्वर भक्ति करने में प्रसिद्ध नीय था, उसने समय को व्यर्थ खो देना बड़ा पाप समझ, दिन रात को तीन भागों में बांट, प्रत्येक भाग को एक २ काम में नियत कर, इस प्रकार से लगा या हुआ था कि, शरीर के अस्वस्थ होने की दशा में भी बीस घड़ियें भोजन, निद्रा, व्यायाम आदि काम में, २० बीस घड़िये राज्य-कार्यों में, और बीस घड़िये पढ़ने, लिखने, और ईश्वर की उपासना आदि में जांय। यह धार्मिक मनुष्य समय को असामान्य बहु मान- और बड़ा अमोलक समझ, परमेश्वर का बार २ धन्य-वाद गाता था कि वह धन्य है! जिसने ऐसी अमोलक सम्पदा हमारे हाथ में दे रक्खी है, यदि इस सम्पदा को हम अच्छी रीति से व्यय न करेंगे, तो उसके पास जाकर हमें दायी होना पड़ेगा।

८। ग्रीस देश में एक अति प्रसिद्ध, महात्मा
कार्गस, जो स्पार्टा नगर का अधिकारी था उसके
पास नगर-वासी लोग एक अपराधी को पकड़,
मार पीट, और एक आंख फोड़कर ले आये, और
इस से कहा कि, ऐसे, दुष्टोंको बड़ा भारी प्राण
दण्ड तक दण्ड देना चाहिये, इसने उत्तर दिया कि,
इसको यहां छोड़, अब तुम चले जाओ, विचार कर
योग्य दण्ड दिया जावेगा। इतना कह जब
वे चले गये, उसको शासना के स्थान, निज-मुख से,
धर्म और नीति की शिक्षा दे, ऐसा धार्मिक और
विनीत कर दिया कि, वही प्रजा-के लोग उसकी वार२
प्रशंसा करने लगे, तब कार्गस ने कहा कि, यह वही उग्र-
स्वभाव, पारद्रोही मनुष्य है, जिसकी एक आंख निका
ल प्राण-दण्ड दिलवाने को तुम मेरे पास लाये थे,
अब इसको शान्त और विनीत करके मैं आप लोगों
को देता हूं, आप इसे ले जाईये और सदा परमेश्वर

की प्रिय दृष्टि के भले मे रहना चाहिये। वे सब कांग्रेस की इस विशेष सुजनता को देख आश्चर्य्य हो, बार२ प्रशंसा करने लगे।

७। ग्रीस देश के भीतर मेगार ग्राम मे एक शिल्पो नाम बड़ा धीर पण्डित रहताथा, जिस्का सब माल ओ धन डेमिट्रियस के उस नगर पर अधिकार कर लेने के समय लुट गयाथा, किसी ने पूछा कि, इस लूट मे तुमारा कितना और क्या२ माल लुट गिया है शिल्पो ने उत्तर दिया कि, सङ्ग्राम मे हमारा कोई क्या लूट सक्ता है, धर्म्म नहीं छीन सक्ता, और विद्या नहीं ले सक्ता, हमारे दो ही धन है, विद्या और धर्म्म, सो हृदय कुटीर के भीतर निहित हुए२ होने के कारण निर्विघ्न है।

८। किसी राजा का पुत्र मरगिया था, वह उस्के शोक मे कातर हो, राज्य-काज सब भूल चिन्तामे डूब रहाथा, किसी महात्मा धार्म्मिक पुरुष ने उसे

कहा कि, हम तुमारे पुत्रको जीवित कर देंगे, यदि तुम ऐसे तीन जन हमें बता श्रो जिन्होंने शोक की बात भी कभी नहीं सुनी। राजा इतनी बात सुन, एकभी शोक-रहित पुरुष नमिलने के कारण चुपका होरहा।

९। एपिक्टिटिस नाम एक ग्रीक जातीय पण्डित पहिले एक रोमी धनवान पुरुष का भृत्यथा; परंतु अपनी बुद्धि के प्रभाव से दास्य कर्म्म से छूट, ऐसा विख्यात होगया कि, लोग उसे महा-प्रात, बुद्धिमान पुरुषों में गिनने लगेथे,इसमें यह एक बड़ा गुण था कि, जो कुछ लोगों को उपदेश करता आपभी वैसाही करताइसके कहने और करने में एक रत्तीभर भी विलक्षणता नहीं होतीथी। इसकी सहन शीलता की इसप्रकार प्रसिद्धि है कि, एक समय इसका स्वामी परीक्षा करने के लिये इसकी टांग मरोड़ने लगा, यहां तक ऐसी निर्दयता के साथ लपेट दिये

कि, शिष्यो बिलाकर कुछ कहे; परन्तु उसने केवल इतना ही कहा कि, अच्छा। "मेरी टांग टूट जायगी" सो टूट गयी। जब सेक्रेटिस की यह दशा देख उसका स्वामी घबरा रहा था तब इस शान्त-स्वभाव महात्माने इतना कहा कि, "मैतो कह रहा था कि, टूट जायेगी अब क्यों चिन्ता करतेहो। धन्य परमेश्वरहै! जिसकी अनन्त-सृष्टि मे ऐसे २ सहिस्नु पुरुष भीहैं।

१०। जगत मे अति प्रसिद्ध न्यूटन साहिब, जिसने अपने विशेष बुद्धि-बल से ज्योतिष आदि बहु-विध विद्या ओं मे प्रवीणता सम्पादन की हुई थी, यह उसका वचन है कि, "मैने उत्तम उत्तम रत्नोंसे परिपूर्ण अथाह ज्ञानसमुद्र के तीर पर ही खड़े होकर कुछ २ कङ्कड़ २ आदि संग्रह किये हैं।" सॉक्रेटिस नामक एक प्रधान ग्रीस देश का पण्डित भी ऐसे ही लिख गया है कि, "मै एक

ही बात निश्चय जानताहूं कि मैं कुछ नहीं जानता"।

११। सेक्रेटिस ऐसा बड़ा भारी धार्मिक, और ज्ञानी पुरुषथा कि, अपने देशकी कुरीतियों के सुधारने और पण्डितों के भ्रम दूर करने, और बालकों को अच्छी शिक्षा देने के विषय में ही यथासाध्य यत्न किया करताथा; परन्तु वे प्राचीन कुसंस्कारी पण्डित, अपनी भूल को नस्वीकार करते हुए, सेक्रेटिस से विरोध प्रगट कर, झूठ मूठ निंदा, प्रचार करते हुए, लोगों को उसके प्रति-पक्षी बना तेथे। यहांतक कि, एक समय राज्या-धिकारी यों ने भी पक्ष-पात कर, उसे प्राण- दण्ड देने की आज्ञा दे दीथी। विचार कार्य्य होजाने के पीछे, सेक्रेटिस ने राज्य के अधिकारियों को बुला कर कहा कि, मेरा जो इस जगत से चलने का समय आय पहुंचा है, अबजीवन को विसर्जन कर चला चाहताहु कुछ चिन्ताही नहीं; परन्तु तुम

लोगों को इस समय यह शिक्षा देनी उचित समझता हूं कि, अपने जीवन को अच्छी रीतसे व्यतीत करो, यह बिना परमेश्वर के कौन जान सक्ता है कि, किस्की क्या दशा होगी।

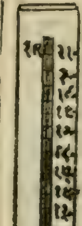
१२। सेक्रेटिस प्राण-दण्ड की आज्ञा पा, ३० दिनों तक कारागार मे रूद्ध रहा, और उस स्थान मे भी अपने मित्रों, और शिष्यों के बीच बयठ, प्रसन्न चित्त और अम्लान-मुखसे सदालाप और सत परामर्श कर, कई प्रकार के अच्छे २ उपदेशों को देता हुआ अपने कालको व्यतीत करतारहा किसीने एक क्षण-मात्र भी उस्के बदन पर खेद का चिन्ह न देखा। यदि कोई अपने मित्रों वा शिष्यों मे से शोक करते हुए उसे दिखाई भी दे, तो उस्को धैर्य्य और सन्तोष की शिक्षा दे समझा बुझा, प्रसन्न कर देता था।

एक समय एक शिष्य को इसप्रकार शोकग्रस्त कर,

चिल्लाते हुए सुना "सेक्रेटिस को निरपराध प्राण-दंड हुआ है यह बड़ा अन्याय है पास बुला कर कहा कि तुम्हारी क्या इच्छा है कि, मैं सापराध मरूं ? निरपराध मरना तो बहुत ही अच्छा होता है। १३। सेक्रेटिस के मित्र इसके कारागार से छुड़ाने के लिये कई प्रकार के उपाय सोच २ इसे बताते थे, परन्तु यह महात्मा किसी अन्याय्य उपाय से इनको सम्मति नहीं देता था। जब इसके क्रेटो नामक एक हित-कारी शिष्य ने काराध्यक्ष को घूस दे, इसे वहां से निकालने की मन्त्रणा नियत की, सेक्रेटिसने सुन कर कहा कि क्रिटो! इस सबों के मस्तक, अपरि वर्त्तनीय मौत के हाथसे निकल, मैं कहां को भागूंगा।

नाप-मान।

सब जड़ पदार्थ परमाणुओं की समष्टिरूप है।



वे परमाणु शीतसे संचने, श्रौर उष्णता से विरले हो, बहुतसे स्थान मे फैलजाते हैं। सोना, रूपा, गन्धक श्रादि वस्तुश्रों को तप्त करने से, उन्के परमाणु उष्णता के कारण श्रलग २ हो, क्रम २ से ऐसे ढीले पड़ जाते हैं कि जलकी नांई तरल श्र-वस्था मे हो, वायुवत् होजाते हैं। जल, बरफ श्रौर वाष्प ये तीनों पदार्थ भी एक ही वस्तु हैं। बरफ उष्ण होने से जल, श्रौर जल उष्ण होने से, वाष्प बन जाती है। एक घन इन्च जल से १७२८ इन्च वाष्प बन जाती है इसी बातसे यह भी सिद्ध होगया कि, श्रग्नि द्वारा जल के उष्ण करने से उस जलका श्रायतन १७२८ गुण बढ़ गया।

इस विषय मे बारूद एक उत्तम दृष्टान्त है कि, जब

उसको आग लगाई जाती है तब अपना आयतन फैलाने को इतना बल करता है कि उस से बड़े २ गोले और गोलियें बहुत २ दूर जाकर बड़े २ दुर्ग आदिकों तोड़ डालते हैं। तेज के प्रभाव से सब वस्तुओं का आयतन बढ़ जाता है इसी बात को देख, पण्डितों ने वायु आदि की उष्णता मापने के लिये एक यन्त्र जिसे तापमान कहते हैं बनाकर प्रकट किया है। नाना देशों मे भिन्न २ प्रकार के यन्त्र व्यवहृत हुए हैं जिनमें से इङ्गलैण्ड देशीय तापमान यन्त्र की आकृति यहां पर दिखाई है।

इसमे एक काच की नली होती है, जिसके नीचे पारा ठहरने के लिये एक कुण्ड बना हुआ रहता है। यह पारा बाहर के उत्ताप से गरम हो, कब कितना ऊपर को चढ़ता है इस बात के जानने के लिये उस नली मे २१२ दो सौ बारह तक के अङ्क लगाये रहते हैं जैसे जल उत्तप्त होने से

वैसे ही पारा भी सन्तप्त हो, उन २१२ अंकों तक बढ़ जाता है। और जितना क्षीण होता जाता है उतना ही नीचे को उतरता ३२ अंक पर आ ठहरता है। यह पारा जब ९८ अंक पर होता है तो इसे सजीव-मनुष्य के शरीरस्थ रुधिर जितनी उष्णता होती है। उक्त ताप-मान यन्त्र फेरोनाईट साहिब के द्वारा प्रस्तुत होने के कारण, इसके साथ किसी वस्तु के तापांश प्रतीत कराने पर, यह कहेंगे कि, फेरोनाईट के ताप-मान के अनुसार इसमे ९८ तापांश है।

जन्म-भूमि

प्रत्येक गृहस्थ का घर, जैसे उसका अपना वास-स्थान है वैसे ही स्वदेश भी हम सबों का एक वास-गृह है। अपने २ परिवार का कल्याण सोचना जैसे मनुष्य मात्र का कर्तव्य कर्म है, वैसे ही एक गृह स्वरूप सम्पूर्ण देशीय पुरुषों का शुभ-चिन्तन करना भी सबके लिये विधेय है। जन्मस्थान स्नेह का आस्पद होता है। जो अपने देश

के साथ प्रीति दिखाने वाले, चिरकाल के प्रवासी, अपने देश की कोई परम-पावनी नदी, सरोवर, ह्रद, उत्सव-भूमि, बन्धुओं के निवास-स्थान, मित्रों की मंडलियें और अपने २ घरों की प्रीति-स्वरूप दिव्य-मूर्ति यें स्मरण करते हैं वेही जानते हैं कि, स्व-देश कैसा प्रीति भाजन है! और स्वदेशीय वस्तुओं मे कैसा प्रेम-मय भाव है! और जो पुरुष देश विदेश घूमता हुआ किसी विदेशीय पान्थ शाला मे ठहरा हुआ अन्य किसी पथिक के मुखसे, अपनी जन्म-भूमि की कोई बात सुन आंसू बहा देता है वही जानता है कि, जन्म-भूमि का कैसा मनो-रम भाव है। "जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी" यह सुधामय महावाक्य जिस पुरुष ने पहिले पहिल अपने मुखसे निकाला होगा वही जानता होगा कि, स्वदेश का कैसा सरस्य भाव है। जिन सब स्व-देश-हितै षी वीर सत्पुरुषों ने दुरन्त-शत्रुओं के कठिन हाथों से, अम्लान बदन, प्रफुल्ल मय-चित्त और उत्साह-पूर्ण

हृदयसे मन धन और प्राणों तक भी व्यय करके मातृ-
स्वरूपा जन्म-भूमि का परित्राण किया है, वेही जानते हैं
कि, प्राण प्रिय जन्म-भूमि के आगे जीवन का तुच्छप
दार्थ है। जहां पर जन्म ले, लालित पालित हो, कुमार,
कैशोर और यौवन अवस्था तक व्यतीत करदी हैं,
जहां माता, पिता, भार्य्या, पुत्र, कन्या, आदि सब प्रिय-
बन्धु निवास करते हैं, जिसके नामका उच्चारण करने से
हृदयमे प्रेम-सिन्धु उछल पड़ता है, उसके समान धरणीमे
दूसरी प्रेम-दायक और क्या वस्तु है? ऐसी जन्मभूमिको
दुःख भाराक्रान्त, विपद्ग्रस्त देख, जिसका अन्तःकरण
विदीर्ण नहीं होता, जिसका होना वह मनुष्यों की गणना
मे ही नहीं है। दुःखके कठोर हाथसे जन्मभूमिका परित्राण
सिद्ध करनेके लिये तत्पर न होकर निश्चिन्त हो, काल हरण
करना, किसी रीतसे भी विधेय नहीं है जो अपनी जन्मभू
मिको विपद पिशाचों के हाथसे मुक्त करना नहीं चाहते,
उनका हृदय पाषाण-सदृश है इसमें कुछ संशय नहीं
उनका असार जीवन, जीवन ही नहीं। इति ॥